चेन्नई के चमकते सितारे

भाग-1

प.पू. युगप्रधान आचार्यसम पं.चंद्रशेखरविजयजी म.सा.

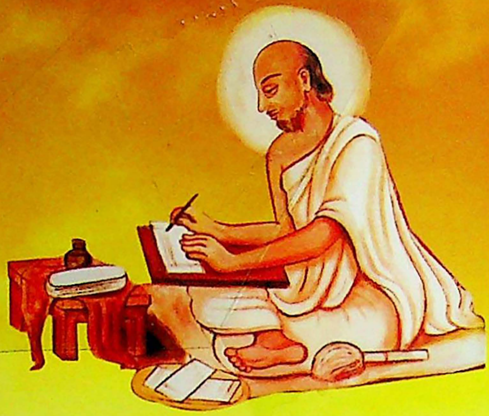

समर्पणम्

ध्रुव तारे के समान

श्री शांतिसूरीश्वरजी म.सा. को,

जिन्होंने दूसरे बहुत से तारों को प्रगटाया...

और

वो छोटे-छोटे सितारों को,

जिन्होने अपने गुणों का दर्शन करवा के

मेरे सम्यग् दर्शन को निर्मल बनाया

मु.गुणहंस विजय

✻ दिव्याशीष ✻

सिद्धांत महोदधि सच्चारित्र चूडामणि

पूज्यपाद आचार्य श्रीमद् विजय प्रेमसूरीश्वरजी महाराज के

विनय पूज्यपाद युगप्रधानाचार्यसम

पू.पं.प्रवर श्री चंद्रशेखरविजयजी महाराज

✻ लेखक ✻

मुनिराज श्री गुणहंसविजयजी म.सा.

✻ प्रकाशन ✻

कमल प्रकाशन ट्रस्ट

102-ए, चंदनबाला कोम्पलेक्स, आनंद नगर

पोस्ट ऑफिस के सामने, भट्ठा, पालडी, अहमदावाद-7.

✻ प्राप्ति स्थल ✻

नरेश भाई
373, मिंट स्ट्रीट, राजेन्द्र काम्पलेक्स
(महाशक्ति होटल के पास)
चेन्नई-79 फोन: 9841087888

सुरेश भाई
401, मिंट स्ट्रीट,पंकु कुंज
दुसरा माला, साहुकारपेट
चेन्नई-79 फोन: 9840318499

विनित जैन
1, पल्लीयप्पन स्ट्रीट,
(अन्नापिलै स्ट्रीट के पास) चौथा
चेन्नई-79 फोन: 95662929:

✻ मुद्रक ✻

DESIGN & PRINTED BY

Firsst Look
IMPRESSION GUARANTEED....
9597511135

प्रस्तावना

वि.स. 2072-73 का चातुर्मास साहुकारपेट जैन आराधना भवन-चन्द्रप्रभ जैन नया मंदिर ट्रस्ट चैन्नई में हुआ। मेरे लिए बहुत सारे अच्छे और नये-नये अनुभवों से भरा हुआ यह चातुर्मास था। सेंकडो गुणवानों के दर्शन मुझे यहाँ हुये। चातुर्मास दरम्यान ही अनेक प्रंसग लिख लेने की भावना थी, परंतु बिल्कुल समय ही नहीं मिला। आज साहुकारपेट छोड़कर हम एम.सी. रोड के स्थानक में आए है, मेरी दीक्षा के 21 वर्ष आज पुरे हुए हैं। छत पर बैठकर शाम के समय यह लिखने का प्रारंभ किया हैं।

चार महिने बीत जाने के कारण कितने ही प्रसंग मैं भूल ही गया होऊँगा, फिर भी मुझे याद करके भी एक-एक प्रसंग लिखना है, 'प्रभु मेरी याददास्त बढा दें' इतनी ही इस प्रसंग पर प्रार्थना करता हुँ।

''तथा संघमांहे गुणवंततणी अनुपबृंहणा कीधी....'' ये शब्द अतिचार में बोलते है, उसका अर्थ यही है कि संघ में रहे गुणवान लोगों की यदि अनुमोदना नहीं करे तो सम्यक् दर्शन का अतिचार लगता हैं।

पू. गुरूदेवश्री ने मेरा जो नाम रखा है, वो सार्थक करना मेरा फर्ज है, इसलिए भी यह छोटी सी पुस्तक लिख रहा हुँ।

इस पुस्तक में दो विभागों में गुणानुवाद हैः-

1. सामूहिक रूप में जो अच्छी चीजें बनी है, उसका गुणानुवाद

2. व्यक्तिगत रूप में जो अच्छी चीजें बनी है, उसका गुणानुवाद

विस्मरणादि से कुछ भी गलत लिखा हो, तो क्षमा चाहता हुँ।

युगप्रधानाचार्यसम पू. गुरूदेवश्री चन्द्रशेखर वि.म.साहेब के शिष्य

गुणहंस विजय

श्री जैन स्थानक

एम.सी. रोड़,चैन्नई

मागसर सुद छट्ठ

वि.सं. 2073 तारीख 5.12.2016

श्री विजय शान्तिसूरीश्वरजी योगीराज
का संक्षिप्त जीवन परिचय

परम पूज्य हिज होलीनेस जगत् गुरु आचार्य सम्राट विश्ववंदनीय श्रीश्री 1008 श्री विजय शांतिसूरीश्वरजी का जन्म आहिर (क्षत्रिय) कुल में ग्राम मणादर (सिरोही) में सं.1946 माघ शुक्ला 5 (बसंत पंचमी) के दिन हुआ था, जन्म नाम सगतोजी था। पिताजी का नाम श्री भीम तोलाजी और माताजी का नाम वसुदेवी था। बाल्यकाल में ही पूर्व जन्म के प्रबल संस्कार से सगतोजी को दृढ वैराग्य हो गया था, फिर गुरु श्री तीर्थविजयजी का समागम हो जाने से आठ वर्ष की उम्र में ही घर बार छोडकर गुरुजी के चरणों में रहने लगे। तदंतर 16 वर्ष की उम्र में महात्मा श्री तीर्थविजयजी ने उन्हें सन् 1905 की वसंत पंचमी को ग्राम रामसीण में दीक्षा दी व उनका नाम शान्तिविजयजी रखा गया। श्री गुरुदेव ने आबू पहाड में वर्षो तक कठिन साधना करके ध्यान बल से आत्मज्ञान प्राप्त किया। बाद में ग्राम ओरी में माता सरस्वती की भी पूर्ण आराधना की, जिससे उनको सर्व भाषा एवं सर्व शास्त्रों का ज्ञान हो गया। मन की बाते सहज में जान लेते थे। जब उनकी ख्याति चारों ओर फैल गई तब संसार के कोने-कोने से लोग दर्शनार्थ आने लगे। इतना ही नहीं राजा-महाराजाओं ने उनके उपदेश से हिंसा आदि व्यसनों का सर्वथा त्याग किया। जगह-जगह जीवदया का प्रचार किया। दूध देने वाले पशुओं का कत्ल बंद कराने के लिए वायसरॉय एवं सम्राट जॉर्ज षष्ठम् तक अपना अहिंसा संदेश पहुँचाया। इनका अंतिम चातुर्मास अचलगढ(माउंट आबू) में हुआ था, वहाँ उन्होने आत्म समाधि पूर्वक 54 वर्ष की आयु में वि.सं. 1999 आसोज वद दशमी , दि. 23.09.1943 गुरुवार को देह त्याग किया। वहाँ से पालखी में उनके पार्थिव शरीर को मांडोली लाया गया और श्री दादा गुरु धर्मविजयजी महाराजा की छत्री के समीप उनके शरीर का अग्नि संस्कार किया गया। उसी स्थान पर सिंध हैदराबाद निवासी पहुमल ब्रदर्स फर्म के मालिक सेठ किशचंद लेखराज ने अपनी अढलक लक्ष्मी का व्यय करके एक भव्य मंदिर बनवाया व श्री गुरुदेव भगवान् की विशाल मूर्ति सन् 2001 में माघ शुक्ला 5 को प्रतिष्ठित कराई।

आज यह स्थान एक तीर्थ स्वरुप हो गया है, जहाँ प्रतिदिन यात्रालुओं की भीड रहती है।

गुरुदेव की इतनी सारी विशेषताएँ थी कि उनका अनुमान लगाना सार्मथ्य से परे की बात है। जिस व्यक्ति में जितना महसुस करने की शक्ति होती है व उतनी ही विशेषताओं को भांप सकता है। अत: उनकी विशेषताओ का वर्णन करने की शक्ति किसी की भी लेखनी में नहीं है।

अनेक जन्मों की साधना से व इस जन्म में 12 वर्षोण की घोर तपस्ता व उच्च कोटि की योग साधना से पातंजलि के योग सूत्र में वर्णित सब सिद्धियाँ व शक्तियाँ उन्हें प्राप्त हो गई थी। योग शास्त्र में वर्णित सिद्ध योगी की तरह आपकी देह मक्खन से भी कोमल थी। हथेली बिल्कुल गुलाबी, उँगलियाँ मांसक, लम्बी , आगे से नुकीली एवं इतनी भव्य और सुंदर-सी आज तक और किसी की देखने में नहीं आई। चलते समय इतनी कोमलता एवं धीरे से पैर रखकर उठाते थे कि मानो पैर पृथ्वी पर न रखकर अधर रूप से ही चल रहे हों। आपकी आँखे तो अनुपम थी, उनसे ऐसा अमृत झरता था कि दर्शक आपके दर्शन करते ही मंत्रमुग्ध हो जाता था।

गुरुदेव यह सतत् प्रयत्न करते थे कि प्राणी मात्र का कल्याण हो। उनका पूरा जीवन जगत के कल्याण करने में बीता और आज भी भक्तों के कल्याण के लिए प्रत्यक्ष है।

प्रोजेक्ट नहीं : फंड नहीं

पूज्यपाद गुरूदेव श्री ने मुझे दो नियम दिये थे।

1) सभा में तुमको कोई भी फंड नहीं करना।

2) अकेले में तुमको किसी को भी दान के लिए प्रेरणा नहीं करना।

हा ! सभा में कोई भी प्रकार का उपदेश दे सकते है....

अकेले में कोई भी आगे से लाभ लेने आये, तो मार्गदर्शन दे सकते है....

और यह पद्धति मुझसें स्वाभाविक आ गई हैं।

इस चातुर्मास में मुझे एक इच्छा हुई, भावना जागी....''दीक्षा लेने वालो के परिवार वालों को दीक्षा के खर्च करने में तकलीफ होती हैं। अगर वो मध्यमवर्गीय हो, तो एक साथ पाँच-दस लाख का खर्च कैसे कर सकते है?'' फिर वो

- या तो पैसे इकट्ठे करने हेतु दीक्षा आगे सरकाते है....

- या फिर उधार लेकर दीक्षा कराते है और फिर व्याज देते देते परेशान हो जाते हैं।

- या अपनी जमा पुँजी में से दीक्षा कराते है, परिणाम स्वरूप धंधा कम होता है और धंधा घटने से परेशान होते हैं।

- या अपना मन मारकर सादगी से दीक्षा कराने का प्रयत्न करते है, चिंता के साथ दीक्षा कराते हैं। संतान की दीक्षा को आराम से, उदार मन से नहीं करा सकते।

इसलिए विरतिदूत में ऐसी जाहेरात की गई कि, ''जिस परिवार को अपने संतानों को दीक्षा दिलाने में पैसों की मुश्कील हो रही हो, वो हमें बताएँ। हमारी जितनी शक्ति होगी उतनी भक्ति करेंगे। आपका नाम गुप्त रखा जाएगा। देने वालों का नाम भी कहीं नहीं आएगा, आपके नाम से ही दीक्षा होगी....''

जाहेर में तो फंड नहीं कराना था पर प्रेरणा तो कर सकता था। अतः मैंने की। कह दिया कि 100 रू. से लेकर जिसको जितना पैसा देना हो वो दे सकते हैं। जिसको देना हो वो उपर आकर मुझे मिले। नरेश भाई आदि श्रावक ये व्यवस्था संभालते है.... उनको मिल सकते हो। आप कितना पैसा देते हो यह महत्त्व का नहीं है पर किस भाव से देते हो वह महत्त्व का हैं।

और आराधना भवन के आराधकों ने अपनी भावनाओं का साक्षात्कार करा दिया

- जाहिर में एक रूपये का फंड नहीं....

- दाता का नाम या बहुमान कहीं नहीं....

- अकेले में एक रूपये की प्रेरणा नहीं.... अगर वो 1000रू.दे तो 1001 भी देने को

नहीं कहना बल्कि उसको भी कम कराना।

फिर भी एक के बाद एक लोग आते गये, गुप्त रूप से श्रावकों को पैसे देते गये...

इसके बहुत सारे प्रसंग तो बाद में लिखुगा, अब सिर्फ अंतिम हिसाब बताता हुँ, लगभग 80 लाख से 1 करोड़ रू. इस तरह लोगों ने दिये।

चैन्नई के लिए 10-20 करोड़ देना भी बड़ी बात नहीं, पर इस तरह से नहीं, वो दूसरी रीत से। इस तरह(यानी कि नाम-बहुमान बिना) इतना बड़ा फंड कम से कम मेरे लिए तो आश्चर्यजनक ही था।

इसके आधार पर आज तक भारत के अलग-अलग स्थानों में 12-13 दीक्षा कराने का लाभ इस संघ के सदस्यों ने लिया....

ये पैसा पसीने की कमाई का....

ये पैसा नीति की कमाई का....

ये पैसा पवित्र भावों से भरा हुआ पैसा....

मुझे नहीं लगता कि मेरे भविष्य के वर्षो में ऐसा वातावरण मुझे दूसरी बार देखने को मिलेगा।

हम लोगों के लिए विश्वास पात्र बने क्योंकि लोगों ने समझ लिया था कि 'म.सा. हमारे पास 1 रूपया भी नहीं माँगेगे, हम करोड़पति होंगे तो भी नहीं।'

इसलिए ही पूरी खुमारी के साथ हम जी सके।

श्रीमंतों की प्रशंसा-चापलुसी करने की जरूरत नहीं पड़ती।

आनंदघन जी तो नहीं बन सके पर इतना छोटा सा अंश भी हमारे अंदर आए तो हमारा कल्याण निश्चित हो जाएगा।

आपको शायद ऐसा लगता होगा कि, ''यह तो सब स्वप्रशंसा ही कर रहा हुँ।''

मेहरबान ! कृपा करके परदोष देखने के बदले उसमें से गुणों को पकड़ कर गुणों को उतारनें का तो प्रयत्न करना ही.... मेरे दोष देखने से आपको लाभ नहीं होगा, मेरी निंदा करने से आपको लाभ नहीं होगा....

बाकी तो जैसी मेहरबान की इच्छा ! बोलने की आजादी वाले इस जमाने में कौन किसको रोक सकता हैं? अस्तु !

वैयावच्ची नंदिषेण का अवतार

''गुरूजी ! आपने राजकोट में मेहनत की थी ना, स्थंडिल को सुका दे, राख जैसा बना दे ऐसा कोई केमिकल मिल जाए....तो साधु-साध्वीजीओं को अब जो स्थंडिल परठने आदि में बहुत मुश्कील होती है, उसका निराकरण हो जाए....'' शीलगुण वि. ने तीन वर्ष पहले की बात मुझे याद करायी।

''हा ! पर हम असफल रहे।''

''ये श्रेणिक नाम का युवान हैं। ये जिस कम्पनी में काम करता है, उनका केमिकल का बड़ा धंधा है और उसका मालिक भी जैन हैं। मैंने उससे बात की है कि अपने सेठ को लेकर आना, हम उनके साथ बात करेंगे।''

''ये बड़े लोग आएँगे?''

''आएँगे, श्रेणिक कह रहा था, कि सेठ बहुत ही अच्छा है....''

''अच्छा, बुला दो उनको''

''आज शाम को ही आने वाले हैं।''

आराधना भवन-चेन्नई के चातुर्मास के पहले वहाँ ही नजदीक में गुजरातीवाड़ी के उपाश्रय में हम रूके हुए थे उस समय की बात हैं। जेठ वद महिना चल रहा था(मारवाड़ी के हिसाब से अषाढ़ वद।)

शाम के समय श्रेणिक अपने सेठ को लेकर आया, अंधेरा होने आया था, इसलिए चेहरा तो बराबर नहीं दिखा, परंतु इतना ख्याल आ गया कि, '40 के आसपास की उमर का युवान हैं।'

'इनका नाम दीपक भाई है, बड़ा काम है, बहुत सारी जवाबदारी इनके उपर है''

''दीपकभाई ! एक बहुत ही महत्त्वपूर्ण काम हैं।'' मैंने सीधा कहना शुरू किया 'कुल 10000 संयमी है, आप तो जानते ही हो कि हम सब संडास का उपयोग नहीं करते। आजकल शहरों में या गाँवों में भी बाहर स्थंडिल जाने का बहुत ही मुश्कील हो गया है, उसमें भी विशेषकर साध्वीजी भगवंतो के लिए।

वो एकदम ध्यान से सुन रहे थे।

''आपका केमीकल का काम है, आपके पास केमिकल-इंजिनियर भी हैं, तो आप उन सब के द्वारा मेहनत करा कर ऐसा प्रयोग कर सकते हो कि ऐसा केमिकल तैयार कराए जिसके द्वारा स्थंडिल सुक जाय, अंत में राख बन जाए, ऐसी राख परठने में कोई मुश्कील नही होगी' मैंने बात पूरी की।

''म.सा. ! आपका आदेश है तो यह काम शुरू करूँगा, परंतु आपको एक बात पूछता हूँ कि इसकी खोज करते तो बहुत सा समय लगेगा। अभी आपको या साध्वीजीओं को साहुकार पेट में कोई समस्या है?' दीपक भाई ने नम्र स्वर में प्रश्न किया।

''हमको तो नहीं है....''

''देखो साहेब जी ! अगर कोई भी समस्या हो तो मेरी एक विनंति है.... यह लाभ मुझे दो''

''वो कैसे?'' मैं चौंक गया।

''यानी हम परठ कर आएँगे। वो कैसे करना? यह मुझे नहीं आता, पर आप मुझे मार्गदर्शन देना। मुझे सामान्यतः ऐसा ख्याल है कि 'प्याले में स्थंडिल जाकर परठने जाते तो अब ऐसा कर सकते है कि उपाश्रय में एक तरफ सब प्याले रख देना और फिर मुझे टाईम बता दो, उस टाईम आकर डब्बे में सब प्याले लेकर मैं दूर तक चलकर जाऊँगा और रेल-पटरी वगैरह जैसी जगह पर परठ कर आऊँगा और फिर धोकर प्याले वापस रख जाऊँगा, इतना लाभ मुझे दो....'

मैं तो आश्चर्य चकित हो गया, मेरी आँखे फट गई। 'यह व्यक्ति क्या कह रहा हैं?' यह समझते मुझे देर लगी, ''मैं नींद में तो नहीं हुँ? कोई स्वप्न तो नहीं देख रहा हू ना?'' ऐसा विचार मुझे आ गया।

मैंने उनके भावों की अनुमोदना की।

''म.सा. ! इसमें मैंने कोई बड़ा तीर नही मारा, आप प्रवचन में यह बात करोंगे तो दूसरे भी बहुत सारे श्रावक इसके लिए तैयार हो जाएँगे.... आपको जब भी जरूरत पड़े तब मुझे बताना। बाकी आपके कहे अनुसार केमिकल खोज का प्रयत्न तो चालु करूँगा ही, पर मेरे अनुभव अनुसार उसमें सफलता का आसार कम लग रहा है....''

उसके जाने के बाद श्रेणिक भाई ने हमकों कहा कि, ''म.सा. ! दीपकभाई के पास कितने रू. है इसकी तो पक्की खबर नहीं परंतु बाजार में लोग कहते है कि, ''ये 2000 करोड़ की पार्टी हैं।'' 'म.सा. ! उससे ज्यादा भी हो सकते है और कम भी ! परंतु अरबों रूपये है यह बात तो पक्की।''

दूसरे दिन प्रवचन में मैंने उनकी सच्चे भावों से अनुमोदना की और कहाँ कि मुझे ऐसे कम से कम पाँच युवानों के नाम चाहिए।

प्रवचन के बाद तुरंत ही राहुल भाई, जयंतीभाई, नरेशभाई वगैरह पाँच नाम

फटाफट आ गये। उन्होंने कहाँ ''म.सा.! हमको तो पता भी नही कि हम ये वैयावच्च कर सकते हैं। आप तो हमको घड़ा या दांडा भी पकड़ने नहीं देते, तो ऐसी सेवा करने का तो विचार भी कहाँ से आए? आप कभी भी हमको यह लाभ दे सकते हो।''

एक बात पक्की थी कि श्रावकों को यह काम देने का था ही नहीं, परंतु उनकी भावधारा कहाँ तक पहुँचती हैं? वो किस हद तक वैयावच्च करने के लिए तत्पर हो सकते है? यह मुझे देखना था।(ऐसी परीक्षा करने का मुझे हक नहीं है, क्योंकि स्थंडिल परठने की सेवा मैंने भी कभी नही की, हा! पू. गुरूदेवश्री का लाभ कभी कभार मिला था, वो लिया पर बाकी मैंने दूसरे ग्लानादि की सेवा भाग्य से ही की होगी।)

संयमीओ! अरबों की सम्पत्ति का मालिक एक 40 वर्ष के आस-पास की उमर वाला श्रावक एकदम साफ मन से, सच्चे भावों से स्थंडिल परठने के लिए दूर तक चल कर जाने की तैयारी रखता हो तो हमें अपने बड़ो की-वृद्धों-बाल-ग्लान आदि की सेवा में कितना ध्यान रखना चाहिए? नूतन दीक्षित वगैरह को शुरूआत के दिनों में ऐसी आदत नहीं होती, उस वक्त उनका संकोच दूर करने के लिए हमको क्या करना चाहिए? कैसे शब्द बोलने चाहिए? उसके लिए ट्यूशन क्लास खोलने की जरूरत तो नही है ना?

इच्छाकारी भगवन्! पसाय करी पच्चक्खाण का आदेश देना जी

''म.सा.! कल आपने व्याख्यान में न्याय म.सा. के आयंबिल की अनुमोदना की थी, यह सुनकर बहुत ही आनन्द आया, एक ही पात्रे में सब वापर लेना, पारने में भी मिठाई-साग चुरकर वापरना, हल्दी मिठाई में बराबर मिलाकर वापरना.... बाप रे!''

''साहेब जी! यह सुनकर मैंने एक संकल्प किया हैं। मैं पाँच तिथि नमक नहीं वापरूंगा। कोई भी वस्तु में उपर से नमक नहीं डालूँगा। और नमक वाली वस्तु भी नहीं वापरूँगा।

वैसे तो पाँच दिन बिना नमक का आयंबिल करू तो चलता है, पर मम्मी को मेरी थोड़ी ज्यादा ही चिंता होती है और मैं ज्यादा त्याग करता हूँ तो रोने लगते हैं। इसलिए मैंने निर्णय किया है कि भले तीनों टाईम वापरू, पर दाल-साग-रोटी-चावल वगैरह हरेक वस्तु नमक के बिना ही वापरूगा।

हा! पाँच तिथि घर पर मेरे लिए अलग बनाना पड़ेगा, पर इतना तो वो लोग कर ही लेंगे।''

इतना बोलते-बोलते तो ये भाई अपने ही इस सुकृत के लिए अत्यन्त भावविभोर

बन गए थे।

''म.सा. ! मुझे इसका नियम दो....''

मैंने नियम तो दिया, पर इस चिंतन के साथ कि, 'बार-बार न्याय म.सा. की अनुमोदना करने वाला मैं, उनके बारे में बड़ी पुस्तक लिखने वाला मैं मैंने अब तक कभी भी उनकी अनुमोदना के लिए एक भी आयंबिल नही किया, एक भी दिन मिठाई का त्याग नहीं किया, एक भी दिन बिना नमक का खाना नहीं खाया।

और ये भाग्यशाली तो एक ही बार प्रवचन में उनकी अनुमोदना सुनकर सीधे इतना मुश्कील नियम लेने आ गए।

यह भाई कौन हैं? आपको पता हैं?

स्थंडिल परठने का रोज-रोज का लाभ मांगने वाले अरबोपति व्यक्ति **दीपकभाई पारसमलजी कँवरलाल जी वैद!**

पू.आ. प्रद्युम्नसुरिजी म. कहते थे कि 'प्रवचन के बाद पच्चक्खाण का जो आदेश मांगते है, वो मात्र नवकारशी.... उपवास का नहीं होता परंतु पुरे प्रवचन में गुरू जो उपदेश देते है, उसमें से शक्ति-भावना के अनुसार एक दिन के लिए भी कुछ अभिग्रह लेना और इस तरह प्रवचन को सफल बनाना। इसलिए पच्च. का आदेश मांगा जाता हैं।'

(संयमी भी गुरू की-वडीलों की वाचना के बाद हर रोज एक दिन के लिए ही सही पर छोटे-छोटे नियम ले सकते हैं।)

न तस्य दानं विरहय्य सत्क्रियाम्

''साहेब जी! एम.पी. से आया हूँ, मेरा लड़का पढ़ने में बहुत होशियार है, कॉलेज में अव्वल नंबर लाया है, ये रहा उसका रीजल्ट! अब उसको पढ़ने के लिए बड़ी कॉलेज में भेजना हैं। फीस के पैसे इकट्ठा तो कर रहा हुँ, पर अभी तक पूरा नहीं कर पाया, आप कुछ सहायता कर सको तो?'' एक श्रावक ने आराधना भवन में विनती की।

इस तरह किसी को भी रकम दिलाने की शक्ति मेरे पास नहीं हैं। इसलिए मैंने उसको भुवनभूषण म.सा. के पास भेजा।

शाम को उन्होंने मुझे समाचार दिये, ''मैंने उस भाई को कहाँ कि हम किसी को भी पैसे के लिए नहीं कहते। आप आपकी तरफ से मेहनत करो,कोई देगा तो हमें खुशी ही होगी।''

वो एक दो जगह जाकर वापस आए, ''हम चेन्नई में ही देते है बाहर नहीं.... वगैरह जवाब उन ट्रस्ट संस्थाओं ने दिया और मुझे कोई सहायता नहीं मिली।'' ऐसा उन भाई ने कहाँ।

''देखो, भाई! आपको एक श्रावक की ऑफिस बताता हुँ, वहाँ जाओ, वो दे दे तो अच्छा! हमारा नाम मत लेना, हमको उनका विशेष परिचय नहीं है, सिर्फ इतना पता है कि श्रावक अच्छे है.... पर नहीं मिले तो वापस हमारे पास मत आना।''

वो भाई गये, एक घंटे बाद वापस आए। मुझे थोड़ा गुस्सा आ गया, मैंने कहाँ, ''भाई! आपको मना किया था कि अब मेरे पास मत आना।''

और वो श्रावक आँसु बहाते हुए बोले, ''साहेब जी! आपके पास मांगने नहीं आया, परंतु आपने मुझे जहाँ भेजा था, उन की अनुमोदना करने आया हूँ।''

ऑफिस में प्रवेश किया तब ख्याल आ ही गया कि ये तो बहुत बड़े इंसान लगते है। मैंने उनसे पूरी बात की, बेटे का रीजल्ट बताया। उन्होंने शांति से मेरी बात सुनी, सब देखा.... फिर पूछा ''खाना बाकी है आपका?''

मैं तो आश्चर्यचकित हो गया, खाने का समय तो कब का हो गया था, पर पैसे के लिए भाग दौड़ करते हुए मैंने खाने की फिकर नहीं की थी।

''हाँ! बाकी है, श्रीपाल भवन में (भोजनशाला) खा लुँगा।''

''ऐसे नहीं चलेगा, चलो, हमारे घर ही खाना पड़ेगा, घर उपर ही हैं।''

और वो खुद मुझे अपने घर ले गये, खुद खड़े होकर बराबर भोजन कराया। मैं तो

देखता ही रह गया। एक अरबपति व्यक्ति मेरी भक्ति कर रहा था।

भोजन के बाद वे मुझे वापस अपने ऑफिस में लेकर गये। मेरे मस्तक पर कुमकुम का तिलक किया, 11,000 रू. का चेक सीधा उस कॉलेज के नाम पर लिख कर दे दिया। मेरा विशेष परिचय नहीं होने से पैसे नहीं दिये। रूपये योग्य स्थान पर ही खर्च हो रहे थे इसलिए उन्होंने दे दिया।

साहेबजी! चेन्नई की धरती पर ऐसे उदार विनयवंत श्रावकों ने जन्म लिया है उनकी प्रशंसा करने के लिए ही आपके पास वापस आया हुँ। बाकि, दानवीर तो हमारे जैसे साधर्मिकों को कैसे देते हैं, वो मुझे पता है, पर... जाने दो! उनकी निंदा करके क्या फायदा? वो दान देते है, उनका वह बहुत बड़ा सुकृत हैं।''

''कौन है ऐसे उत्तम दानवीर?'' मैंने भुवनभूषण म.सा. से पूछा।

''ये ही अपने **दीपकभाई पारसमलजी वैद!**'' उन्होंने हँसते-हँसते रहस्य खोला।

(**किरातार्जुनीय ग्रंथ** में दुर्योधन के बारे में वर्णन करने में आया है कि 'वो जब भी अपने सेवकों को अपनी विशिष्ट सेवा के बदले इनाम-दान देता, तब ऐसे ही नहीं देता, परंतु पुरे आदर-सत्कार के साथ, बहुमान से देता।'

दुर्योधन जैसा पापी कहलाने वाला राजा भी इतना औचित्य तो समझता ही था। पर हम जैनशासन को पाए हुए पुण्यशाली-धर्मी कहलाने वाले संयमीओं और गृहस्थ **क्या इतना समझ पाए हैं?** कि किसी को भी देते समय उसको दीन-हीन महसूस नहीं कराना, ''उसके उपर हमनें उपकार किया है'' ऐसा नहीं दिखाना....)

दीपकभाई ने उन भाई को फोन नंबर देकर कहाँ कि भविष्य में और जरूरत पड़े, तो निःसंकोच बताना....

पर्युषण किसके लिए?

''क्युँ भाई? पर्युषण में दिखे ही नहीं? बाहर गाँव गए थे?'' एक परिचित भाई को मैंने पूछा।

''हाँजी, साहेबजी! बाहरगाँव पर्युषण करवाने गया था।'' नम्रता के साथ उस भाई ने उत्तर दिया।

''क्या बात है? आप आराधना करवाने जाते हो?''

''साहेबजी! हमारे ग्रुप में से मुझे भेजते है इसलिए जाता हुँ, पर मुझे कभी भी बड़े क्षेत्र की अपेक्षा नहीं होती, मैंने कभी ऐसा बड़ा क्षेत्र मांगा भी नहीं। मैं सामने से छोटा क्षेत्र पसंद करता हुँ, यहाँ पर्युषण करता हुँ तो कोई ना कोई काम चालु ही रहता है, इसलिए यह जगह ही छोड़ देता हुँ।''

''इस बार भी छोटे गाँव में ही गया था, मेरी इच्छा थी कि आठो दिन पौषध करना पर स्थंडिल परठने के लिए जगह मिलनी चाहिए न? मेरे सद्‌भाग्य से मुझे गाँव में ही नजदीक में जगह मिल गई, इसलिए मैंने आठो दिन पौषध कर लिये।''

''मजा आया?'' मैंने ऐसे ही पुछा।

''बहुत मजा आया।''

''क्या वांचन करते हो, वहाँ?''

''पू.आ.भ. अजितशेखर सूरिजी म.सा.की प्रत। साहेबजी! मैं कुछ भी मेहनत नहीं करता। इतना ही सोचता हुँ कि ऐसे महान आचार्य भ. ने जो लिखा है वो सब सोच समझ कर ही लिखा होगा, उसमें बढ़ाने की या कम करने की मेरी हेसियत ही नहीं है, इसलिए वहीं प्रत पढ़ लेता हुँ।''

''लोगों को अच्छा लगता हैं?''

''उनको अच्छा लगे या न लगे, मुझे तो मेरी पर्युषण की आराधना पूरी करनी है, और मुझे इसमें पूरा आनंद आता है, इसलिए ही कितने आए? कितने बैठे? कितने गये? सच में साहेब जी! उसकी मैंने कभी चिंता ही नहीं की।''

उन भाई के शब्दों में मात्र दिखावा नहीं था, परंतु सच्चाई थी। ऐसा स्पष्ट लग रहा था कि वो पर्युषण कराने नहीं, परंतु अपनी आराधना करने के लिए जाते है....

वो भाई कौन? वो ही अरबपति(!) **दीपकभाई पारसमलजी वैद!**

(पर्युषण कराने जाने वालों के लिए विचारणीय प्रश्नावली

1) ''बड़ा-अच्छा क्षेत्र मुझे मिले'' ऐसी इच्छा होती हैं?

2) छोटा क्षेत्र मिले, तो दुःख होता हैं?

3)''संचालक पक्षपात करते है, विदेश के क्षेत्रों में वो खुद ही जाते है या अपने परिचितों को भेजते है, हमें तो नही भेजते....''ऐसा विचार आता हैं?

4) वहाँ प्रवचन आदि में संख्या कम आए तो दुःख होता हैं? ''यहाँ के लोंगो को रस ही नहीं हैं।'' ऐसे शब्द मन में या वचन में आते हैं?

5) पर्युषण अच्छी तरह से हुआ हो तो, बड़ा फंड हुआ हो तो, बड़ी तपश्चर्या हुई हो तो.... ये सबको दूसरो के पास जोर शोर से वर्णन करना और उस वक्त अभिमान में, आनंद में डुबकी लगाना होता हैं?

6) अपने से ज्यादा जोरदार पर्युषण किसी दूसरे ने करवाया हो, तो उसे सुनते समय खेद होता हैं? ईर्ष्या होती हैं? उनके दोष देखने का मन होता हैं?

7) ''मैं वहाँ जाकर आठ दिन क्या क्या आराधना करूँगा?'' ऐसा विचार आता है? या ''मैं वहाँ जाकर सबको क्या-क्या आराधना कराऊँगा?'' ऐसा विचार आता हैं?

सयंमी और पयुर्षण कराने जाने वाले.... सब इन प्रश्नों का विचार कर लो। इनके सच्चे उत्तर लिख कर खुद ही उत्तर पत्र चेक करके मार्कस दे दो, और फिर मन से ही नक्की कर लो कि, ''मैं पास? या नापास?'' यदि लगता है कि आप नापास हो तो दीपकभाई जैसे कोई व्यक्ति के पास ट्यूशन शुरू कर दो।)

नीति तपागच्छ नी तेह भली जाणीओ

''सम्मेलन बहुत अच्छा रहा, बहुत सारे निर्णय लिये गए'' एक भाई ने मुझे पालीताना में फागण महिने में हुए विराट तपागच्छीय सम्मेलन के बारे में अपना अभिप्राय दिया।

''हा! निर्णय तो बहुत सारे लिये गए'' मैंने सच्चे मन से पुष्टि दी, क्योंकि जब मैंने यह निर्णय रास्ते में दक्षिण के विहार के वक्त सुने थे, तब मन में भी बहुत खुशी हुई थी, कुछ-कुछ निर्णय तो सच में आश्चर्यजनक थे।

- हाई-वे पर तीर्थ निर्माण नहीं कराना।

- पत्रिका-पोस्टर में देव गुरू के फोटो नहीं....

- वर्षीदान उछाल कर नहीं देना.... वगैरह वगैरह....

पर उनको पुष्टि देने के बाद मैंने निराशा व्यक्त की कि,

- ये सब निर्णय ले तो लिये, पर इनका पालन कितना होगा? यह प्रश्न हैं?

- माईक-स्थंडिल-मात्रु वगैरह महत्त्व की बातों में तो निर्णय हुआ ही नहीं।

उन भाई ने मेरे निराशावाद को सुनकर नम्रता के साथ बताया

''साहेबजी!

1) दो-चार वर्षो की मेहनत के बाद यह सम्मेलन सफल हुआ है, इस मेहनत को हमको निष्फल नहीं जाने देना हैं।

2) 'कौन पालेगा?' ऐसा विचार हमको क्यु करना? हमको तो इतना ही सोचना है कि, ''मैं तो पालूँगा ही, अठारह गच्छाधिपतिओं की भावना को अनुसरने का मुझे लाभ मिलेगा।''

3) अपनी शक्ति के अनुसार दूसरों के पास इसका पालन करवाना, दक्षिण भारत के हर संघ में मैं तो ट्रस्टीओं को इस बारे में पुस्तक भेजुंगा और विनती करूँगा कि विराट तपागच्छ के आचार्यो ने जो निर्णय सर्वानुमति से लिया है, आप सब उसका पालन करना।

4) शक्य हो तो दक्षिण भारत के संघो के ट्रस्टीओं का एक सम्मेलन बुलाकर उनको ये 65 जितने निर्णय व्यवस्थित रूप से समझा दूँगा।

साहेबजी! हमें हताश किसलिए होना? 1 प्रतिशत जितना भी फायदा होता हो, तो वो हमारे लिए लाभकारी ही हैं।

और साहेबजी! इस निर्णय पर धीरे-धीरे अमल करना भी शुरू हो गया हैं।

अब वर्षीदान में उछालने का बंद कर रहे है....

अब पत्रिका-पोस्टरों में फोटो(देव-गुरू के) नहीं दिखते....

दूसरी बात यह कि पू.गच्छाधिपतिश्रीओं ने निर्णय तो ले लिया। अब उस पर अमल कराने का काम तो हम सब का ही है ना! हम ही निराश हो जाएँगें, तो यह काम कैसे होगा''

मैं उस भाई का आशावाद सुन रहा था।

वो शब्दों में से बरस रहा था

''तपागच्छकी मर्यादाओं के लिए बहुमान भाव....''

''18 गच्छाधिपतिओं की मेहनत के लिए आदर भाव....''

''2-4 वर्षो तक साधुओं-श्रावकों द्वारा किये गये परिश्रम के लिए पूज्य भाव....''

''नकारात्मक विचार-उच्चार द्वारा स्व-पर को हताश करने के बदले सकारात्मक

विचार-उच्चार द्वारा स्वपर को उत्साहित कराने वाला **खमीर भाव....''**

मेरी विचार धारा एक श्रावक के शब्दों ने बदल दी।

ये कोई मेरे भक्त नहीं थे,

ये कोई मेरे पीछे पैसे खर्च करने वालों में से नहीं थे,

ये कोई मेरी प्रशंसा करने वाले नहीं थे,

फिर भी उन श्रावक की गुण गरिमा पर मुझे गर्व हैं।

अवसर आए, तब उनकी सलाह लेने में मुझे शरम नहीं लग रही थी।

ये भाई यानी दीपकभाई पारसमलजी वैद!

(इसको पढ़ने वाला हर एक व्यक्ति संकल्प करें कि वो, ''तपागच्छीय विराट सम्मेलन की ये पुस्तक लेकर पढ़ेंगे, बराबर समझेंगे, समझ में नहीं आए तो साधु भगवंत को पूछ लेंगे, दूसरों को भी पढ़ाएँगें और उसपर बराबर अमल करेंगे, कोई भी निर्णय में फेरफार करने जैसा लगे, तो कोई ज्ञानी तपागच्छीय गुरू भगवंत की सलाह लेंगे।'' इतना संकल्प सबको करना है और उसका पालन करना हैं।)

गुरूमा तेरे चरणों की, एक धुल जो मिल जाए.....

पर्युषण के बाद बहुत सारे घरों में सुबह पोने आठ से नौ बजे तक पगलिया करने जाता। पगलिया करना यह मुख्य उद्देश्य नहीं था, परंतु उपाश्रय में नहीं आने वाले बहुत सारे लोग वहाँ उन-उन घरों में इकट्ठे हो जाते। उनको आधा घंटा प्रवचन सुनने को मिल जाता, उस बहाने से वो छोटा-बड़ा भी धर्म पाते।

एक दिन इस तरह ही पगलिये करके उपाश्रय वापस आ रहा था, तब मेरे पैर कीचड़ से सन गये थे। क्योंकि पिछली रात बारिश आई थी और साहुकार पेट में बारिश में कीचड़ जल्दी हो जाता है, यह प्रसिद्ध हैं।

पगलियाँ नक्की हो जाने के कारण और पगलिये करने जाते वक्त बारिश चालु नहीं होने के कारण गीले रस्ते के दोष को स्वीकार करके मैं गया, पर वापस आया तब....

सवा नौ बजे प्रवचन करने के लिए जैसे ही आसन के उपर से खड़े होकर कपड़ा पहनने लगा, उसी वक्त सामने खड़े एक श्रावक की नजर मेरे पैरों पर पड़ी। सुक कर जमा हुआ कीचड़ उन्होंने देखा।

''म.सा. ! आपके पैरों पर तो कीचड़ लगा हुआ है'' ऐसे कहकर वे नीचे बैठकर

अपने दोनों हाथों को कीचड़ पर जोर-जोर से घिस-घिस कर कीचड़ निकालने लगें।

''प्रकाश भाई ! आपके हाथ बिगडेंगे....'' मैंने उनको रोकने का प्रयत्न किया, परंतु सुने तो ना....

एक-दो मिनिट तक वो सुका हुआ कीचड़ घिस-घिस कर साफ किया और अंत में दोनों हाथ अपने सिर पर घिस दिये। मेरे पैर का कीचड़ अपने सिर पर लगाया, आँख में से हर्ष के दो आंसु गिराकर मेरा आसन लेकर प्रवचन हॉल की तरफ चलने लगे।

ऐसा ही एक प्रसंग थोड़े दिनों बाद दूसरे भाई का हुआ। उनके घर पगलिये करने गया, तब उन्होंने रास्ते में कहाँ कि, ''घर अेकाद कि.मी. दूर होने के कारण आपका विशेष लाभ नहीं ले सका, परंतु मेरी श्राविका ने आपके बहुत सारे प्रवचन सुने हैं। उनकी इच्छा बहुत थी कि आपके पगलिए कराए....''

जब उपाश्रय वापस आया, तब उन भाईने भी पैर के तलवे घिस-घिस कर सब धूल निकाली और दोनों हाथ सिर पर घिस दिये।

सुखी परिवार के उस भाई को मैंने पूछा कि, ''ऐसा आपको किसने सिखाया?''

''माता-पिता ने....'' 40 वर्ष के आसपास की उमर वाले भाई ने जवाब दिया, ''माता-पिता मुझे कहते थे कि साधु बाहर से आने के बाद पैर तो धोते नहीं इसलिए उनके पैर मैले रह जाते हैं। इसलिए हमें अपने हाथ से ही वे पैर घिस-घिस कर शक्य हो उतने साफ कर देना, और फिर हाथ नही धोना.... नहीं तो साधु को दोष लगता हैं।''

और प्रथमबार ही परिचय में आएँ हुएँ, जिसका नाम भी मुझे नही पता ऐसे वो भाई भीगी आँखों के साथ धीरे से अपने घर की तरफ वापस चले।

(**गुरू के चरणों की धूल भाग्य खिला देती है....** यह कभी मत भूलना।)

हिमालय

''कैलाश भाई ! दिपावली के आसपास यहाँ उपधान कराने की भावना है उसमें आपका क्या अभिप्राय हैं?'' पयुर्षण के थोड़े दिनों बाद मैंने सुश्रावक कैलाश भाई को पूछा।

''साहेब जी ! यहां स्थंडिल की व्यवस्था का बड़ा प्रश्न हैं।''

''क्यूं? छत पर हो सकता है ना?''

''हो सकता है, पर बहुत मुश्कील हैं।'' ऐसे कहकर वो रूक गए। कुछ बोलना चाहते थे पर रूक गए, अंत में हिम्मत करके बोले, ''संवत्सरी के बाद पांचम के दिन में छत पर गया था, तो तीन-चार प्याले स्थंडिल के पड़े थे। सेंकड़ों लोंगो ने पौषध किया था। पर सबने तो उपवास नहीं किया था, उसमें से जो स्थंडिल गये, वो तो प्याले ऐसे ही रखकर चले गये।''

मुझे याद आया कि मैंने भी प्याले देखे थे, पर फिर मेरा उपयोग चला गया। दूसरे दिन सब प्याले साफ हो गए थे। मुझे लगा कि संघ वालों ने भंगी द्वारा सफाई कराई होगी पर ये कैलाशभाई क्या बात कर रहे थे? वो तो मुझे सुननी बाकी ही थी।

''म.सा. ! तब तो उस स्थंडिल को परठकर उसमें मिट्टी डालकर उससे घिसकर मैंने वो सब प्याले साफ कर लिये, पर उपधान में रोज-रोज इतने लोंगो के लिए ऐसा करना मुश्कील लगता हैं।'' कैलाश भाई ने कहाँ।

''क्या ये चार पाँच स्थंडिल के प्याले आपने साफ किये?'' उपधान की बात भूल कर मैंने सीधा इस बात पर जोर दिया।

''उसमें क्या हैं? वैयावच्च का लाभ मिला, आप साधु-साध्वी भगवंत ऐसी भक्ति का लाभ लेते ही हो ना?''

करोंड़ो रूपयों का धंधा करने वाले सुखी-संपन्न कैलाश भाई ने अपनी नम्रता का साक्षात्कार कराया।

(दीपक भाई की भावना नहीं फली, पर कैलाशभाई को तो सीधा लाभ ही मिल गया। कैलाश यानी **हिमालय**! लोगों को ठंडक देने का काम करने वाला बर्फीला पर्वत यानि **हिमालय**! 120 दिन तक मेहमानों की सबसे ज्यादा भक्ति करने वाले सुश्रावक थे कैलाशभाई !

आँखों में आँसु तो उनको बहुत ही **सहज**,
छोटे से छोटे व्यक्ति के पास क्षमा मांगनी उनके लिए बहुत ही **सहज**,
खुमारी से भरा हुआ जीवन उनके बहुत ही **सहज**....
मेरे शब्दों से नहीं, पर उनके परिचय से ही आप उनको पहचान सकते हैं।)

सच्चा साधु : एक श्रावक

''गुरूजी ! पोपट भाई के बारे में कितनी ही बाते करनी है'' मैं रात को संथारा कर रहा था, तब हेमगुण म. ने मुझे विनंति की।

आराधना भवन के पुराने अनुभवी श्रावक ! और वर्षो से आराधना भवन के ट्रस्टी भी है ! अपार धन संपत्ति के मालिक ! गुणवत्ता उससे भी ज्यादा !

हम जब विहार में बीजापुर पहुँचे, तब पाँच दिनों के लिए हमारे साथ रूके थे। राजस्थान में ''सुखधाम'' उनके स्वद्रव्य से बनाया हुआ तीर्थ हैं। शंखेश्वर में उनके छोटे भाई विक्रमभाई करोड़ों रू. का खर्च करके नयी धर्मशाला बना रहे है, जिसमें साधु-साध्वीओं के संयम को ध्यान में रखकर साथ उपाश्रय भी बनाया है, उनकी उम्र 63 वर्ष !

बीजापुर मिले, तब उन्होंने बात की थी कि, ''दीक्षा लेने की भावना हैं।' पर मुझे, मेरे मन में यह बात बिल्कुल भी नही बैठी। बड़ी उम्र, घुटनों का दर्द, विहार करना लगभग अशक्य.... फिर दीक्षा लेने का मतलब क्या?

वैसे भी ये दूसरों के पास दीक्षा लेने वाले थे, इसलिए मैंने उनको कुछ भी नही कहाँ। पर मैंने मेरे साधुओं को बीजापुर में ही कहा था कि ''ये भाई दीक्षा न ले तो ही अच्छा। मेरे पू. गुरूदेवश्री ने अपने साधुओं के लिए नियम बनाया हुआ है कि 56वर्ष से उपर वालों को दीक्षा नहीं देना, इसलिए में तो नहीं ही दूँगा।''

ऐसे इन पोपटभाई के बारे में आज हेमगुण म. कुछ कहना चाहते थे,

''बोलो,'' संथारे पर लेटे-लेटे मैंने उनको कहाँ,

''मेरे पास संस्कृत की पहली बुक पढ़ते है, बहुत कड़ी मेहनत करते हैं। आनन्द की बात यह है कि ये कभी भी नीचे नहीं बैठते, पर संस्कृत के पाठ के वक्त नीचे ही बैठते हैं। मैंने उनको कहाँ कि, ''आपको घुटने की बहुत तकलीफ है तो कुरसी के उपर ही बैठो।'' पर उन्होंने स्पष्ट मना कर दी। कहाँ ''आप मेरे विद्यागुरू हो, ऐसे भले ही मैं नीचे नहीं बैठ सकता, परंतु पाठ लेते वक्त तो नीचे ही बैठुंगा।''

''बहुत अच्छी बात है,'' मैंने प्रशंसा की।

''कल में चौथी मंजिल पर हॉल में बैठा था, हम संस्कृत का पाठ उधर ही करते हैं। मेरी टेबल+पुस्तक तीसरी मंजिल पर थी। समय हो चुका था। अतः मैं वहाँ लेने के लिए नीचे जाने लगा, पर तभी मैंने टेबल वगैरह पकड़ कर उपर चढ़ रहे पोपटभाई को देखा। मैंने कहाँ कि, ''आप क्यों लेकर आ रहे हो? इस उम्र में इतना वजन नही

उठाना....'' तो उन्होंने हँसते-हँसते कहाँ, ''साहेबजी ! आप तो विद्यागुरू हो, आपकी ऐसी अद्भुत सेवा का लाभ कब मिलेगा?''

मैं सुन ही रहा था....

''उन्होंने पक्खि सूत्र+पगाम सिज्जा+साधु अतिचार+खामणा वगैरह सब सुत्र इस उम्र में भी मेहनत कर करके याद कर लिए हैं।''

''शाबाश....''

''मुझे मलेरिया हुआ था, तब रात को लगभग आठ बजे इंजेक्शन के बाद मुझे गर्मी लग रही थी, तो आपसे पुछ कर मैं एकदम उपर पांचवी मंजिल पर छत पर गया ताकि ठंडक मिले, आपको याद ही होगा?''

''हा'' मैंने कहाँ....

''उस दिन पोपट भाई को प्रतिक्रमण में पता चला, तो वे+थानमलजी+छगनजी तीनों वयोवृद्ध श्रावक लिफ्ट होते हुए भी लिफ्ट का उपयोग किये बिना पहली मंजिल से चढ़ते-चढ़ते तीसरी मंजिल पर आये, फिर आपने कहा कि हेमगुण म. तो छत पर है....

फिर भी ये तीनों ही बुजुर्ग चढ़ते-चढ़ते ही छत पर आए और मुझे शाता पूछी, थोड़ी देर बैठे, फिर गये। ऐसा लग रहा था, जैसे ये लोग मेरे दादाजी हो ! एकदम स्नेही स्वभाव !''

मुझे वो दिन याद आ गया। थानमलजी ने मुझे तब कहा था की, ''हम तीनों उपर चढ़ रहे थे, तब पोपटजी ने हम दोनों की सामायिक की थैली भी ले ली थी, बोलो साहेबजी ! ये हमारी सेवा करते है....''

''उन्होंने संस्कृत बुक की परीक्षा लिखी, गुरूजी ! 75 प्रतिशत मार्क्स लाए हैं। मैंने बढ़ा कर एक भी मार्क्स नहीं दिया, उनको संस्कृत वांचन में बहुत ही मजा आता हैं।''

''तो तो इन करोड़पति ट्रस्टी को भी हमको 5000 रू. की प्रभावना देनी पड़ेगी,'' मैंने हँसते-हँसते कहाँ।

''और सबसे महत्त्वपूर्ण बात तो यह कि बहुत बार वो रोते है, दीक्षा लेंने के लिए तड़पते है, दूसरी तरफ घुटने के दर्द के कारण घबराते है, वो कहते है कि, ''मुझे दीक्षा के बाद सबकी सेवा ही लेनी पड़ेगी, तो मुझे पाप लगेगा ना?''

मैंने पूरी बात सुन ली।

बीजापुर से लेकर आज तक का मुझे उनका जो परिचय हुआ है, उससे तो मुझे लगता है कि ''ये श्रावक के वेष में साधु हैं।''

हमेशा स्वाध्याय, दूसरी कोई बात की पंचायत नहीं। दिन में 7-8 घंटे पढ़ते होंगे, अनेक पौषध करते हैं। हमारे साथ उपाश्रय में ही रहते हैं। 63 ओली की और पारने में एकासणा मुझे तो बाद में ही पता चला।

उनकी व्यवहार दीक्षा होगी या नहीं? ये तो मुझे नही पता, पर उनकी भाव दीक्षा हो चुकी है, ऐसा मैं मानता हुँ। मेरा बीजापुर वाला विचार बदल गया। यदि ये मेरे पास दीक्षा लेने को तैयार हो, तो मैं बहुत खुशी से दीक्षा दुंगा। **मेरे पू. गुरूदेवश्री स्वर्ग में बैठे-बैठे मेरे इस निर्णय से खुश होंगे,** ऐसा मुझे विश्वास हैं।

14 वर्ष के भव्य के पास भी संस्कृत का पाठ लेने में उनको शरम नहीं ही आती, और उस वक्त भी, भव्य का विनय करने के लिए वो जमीन पर ही बैठते थे, कुर्सी पर नहीं।

ऐसे आराधक का दर्शन कलिकाल में दुर्लभ है, जो मुझे तो मेरे प्रचंड पुण्य के प्रताप से सहज ही मिल गया हैं।

पहली प्रभावना किसकी?

चौमासे के प्रवेश के दिन भी सिर्फ पाँच ही रूपये की प्रभावना करने का नक्की किया। 1100 रूपये का नकरा था, कुल पाँच नाम लेने थे। नाम तो बहुत आ गये थे, बहुत यानी 100 के आसपास.... परंतु पहले दिन का महत्त्व था, यानी की 100 में से कोई भी पाँच नक्की करने थे।

''मत्थएण वंदामि....'' राजेन्द्र भवन में दोपहर ढाई बजे एक भाई वंदन करने आये, चातुर्मास प्रवेश के पहले वाला दिन था। मैं तभी आराम करके उठा था।

''म.सा.! मुक्तिप्रभाश्री जी म.सा. को आप जानते हो ना?'' वंदनादि के बाद उन्होंने मुझे पूछा, पर मुझे कुछ याद नहीं आया।

''होसपेट में आपको दर्शनप्रभाश्रीजी मिले थे ना, उनके साथ चेन्नई के एक साध्वीजी थे....''

''अरे हा! एक लाख बहनों को गर्भपात बंद करने का उपदेश देने की उनकी प्रतिज्ञा है और तब तक मिठाई का त्याग किया हुआ है.... बराबर!''

''वो मेरे संसारी बहन हैं।''

''वाह ! आप तो धन्य हो गये'' तभी मेरी नजर उनके साथ आए एक भाई पर गिरी !

माथे पर तीन सफेद तिलक देखकर ख्याल आ गया कि, ''ये कोई तमिल भाई है, जैन नहीं।''

''ये भाग्यशाली कौन?''

''हमारी दुकान पर काम करते है, ऐसे तो अजैन है पर हमारे साथ बहुत घुल मिल गये हैं। पिछले 21 वर्षो से हमारे यहा हैं। 21 वर्षो से मांस खाना छोड़ दिया हैं। बहन म. की दीक्षा हुई, तब से हर वर्ष उनके दीक्षा के दिन ये भाई उपवास करते हैं ! वो भी हम जैनों का उपवास ! हर संवत्सरी को भी उपवास करते हैं। हम हमारी बहन म. की दीक्षा के दिन खाते है, पर ये नहीं....''

मैंने उन भाई की तरफ देखा, अपनी प्रशंसा के वक्त भी ये बालक जैसे हँस रहे थे,

''साहेब जी ! पू.आ. अजितशेखर सूरिजी के चातुर्मास के वक्त तो पू. साहेबजी के साथ बहुत जुड़ गये थे, रोज उनके पैर दबाना, वंदनादि करना.... वो जहाँ होते, वहाँ ये पहुंच जाते।''

''क्या नाम है इनका?''

''के. गोपाल!''

''गोपाल भाई, मुझे एक छोटा सा काम है, आप यदि हा कहो तो....'' मेरे मन में कल की चातुर्मास प्रवेश की प्रभावना का विचार आ गया था।

''आप जो कहोंगे , वो करने को तैयार !''

''नहीं ! ऐसे नहीं, पहले मेरी बात सुनो, फिर उचित लगे तो ही हाँ करना ! मैंने कभी भी किसी के पास पैसे नहीं मांगे, पर आपके पास आपकी खुद की कमाई के 1100 रू. मांगता हुँ, बोलो ये दे सकते हो? मुझे पता है कि तुम्हारे इन सेठ को कहुँगा तो 11000 लिखाने के लिए तैयार हो जाएँगे, और वो भी तुम्हारे नाम से ! परंतु मुझे ऐसा नहीं करना। मुझे तो तुम्हारे पसीने के पवित्र पैसे चाहिए, तुम्हारे पगार में से तुमको 1100 रू. देने पड़ेंगे, यदि तुम सहर्ष हाँ कहो, तो कल चातुर्मास प्रवेश में सबसे प्रथम 1रू. की प्रभावना तुम्हारे नाम से कर लेंगे।''

''म.सा. ! मेरा ऐसा अहोभाग्य? कि आराधना भवन जैसे महान संघ में मुझे सबसे पहले 1 रू. की प्रभावना का लाभ मिले। मंजूर है'' के. गोपाल ने कहाँ, उनकी

आँखों में हर्ष के आँसु थे।

दूसरे दिन प्रवेश के समय से ही वो हमारे साथ जुड़ गये। तमिल के मुलभूत वेष में, माथे पर त्रिपुंज करके आए गोपालभाई अलग ही दिख रहे थे। प्रवचन में उस छोटे व्यक्ति को आगे बिठाया गया। जाहेर में खड़े करके उनकी अनुमोदना की गयी।

उसके बाद पूरे चातुर्मास में रोज दोपहर ढाई बजे वो उपाश्रय में आते, पाँच-दस मिनिट जिद कर के भी मेरे पैर दबाते, फिर वापस दुकान चले जाते। उन्होंने इस सेवा में कभी भी प्रमाद के कारण रूकावट नही आने दी।

दुकान में से 1100 रू. लेकर सबसे पहले ये रकम भरने वाले भाग्यशाली थे वे के. गोपाल भाई !

आज तो चौमासा पूरा होकर एक महिना हो गया है, कल मौन एकादशी हैं। हम आराधना भवन से 4 कि.मी. दुर एम.सी. रोड जैन स्थानक में पिछले पाँच दिनों से रूके हुए हैं।

ये गोपाल भाई इतने दूर तक रोज दर्शन करने आते हैं। रोज पैर दबाने की विनंति करते है, रोज पाठ आदि के बहाने मैं विनंति को टालता हुँ। फिर भी रोज प्रसन्न चित्त वापस चले जाते है, सिर्फ दो मिनिट के दर्शन के लिए हर रोज 8कि.मी. बाईक का सफर करते हैं। दोपहर का भोजन हमारे दर्शन के बाद तीन बजे करता हैं। **समय + संपत्ति बिगाड़ने वाला (!) यह व्यक्ति मुझे गुरू तत्त्व का सच्चा भक्त लगा।**

(अजैनों में गुरू भी प्रेम+नम्रता आदि गुण होते है, और इसलिए ही वो भाव से जैन ही है, ऐसा मान ही लेना। ये मार्गानुसारिता का गुण उनको भविष्य में मोक्ष में लेकर ही जाता है, यह पक्की बात हैं।)

हालो हालो हालो मारा नंद ने रे....

''साहेब जी ! मेरे इस लड़के को प्रभु के पारणे का चढ़ावा लेने की धुन लगी हैं।'' पयुर्षण बाद एक माँ-बाप अपने सात वर्ष के उम्र के देवकुमार जैसे बालक को लेकर मेरे पास आए। दोनों के मुख पर आनंद था।

''उसने प्लास्टीक के डिब्बे में अपने पैसे इकट्ठे किये थे। जो भी प्रभावना मिले, हम जो इसको देते है, वो नोट और सिक्के इस डिब्बे में डालता रहता हैं। हमें लगा ''छोटे बच्चे पैसे इकट्ठे करते है वैसे यह भी कर रहा होगा, फिर अपनी पसंदकी वस्तु इससे लेगा, बालकों में ये परिग्रह के संस्कार तो होते ही हैं।''

मैंने बालक की तरफ देखा, वो शांति से सब सुन रहा था, बीच-बीच में भोले मन से मम्मी-पापा के सामने देख रहा था।

पयुर्षण के दिन आये, तब इसने हमें पूछा कि, ''मुझे इस बार प्रभु के पारने का चढ़ावा लेना है, मुझे प्रभु को झुलाना है, घर पर लाना है आप मुझे पैसे दोगे?''

हमने उसकी बालभाषा को मजाक में लिया, हम सब ने उसको थोड़े-थोड़े रूपये दिये। उसने उस डिब्बे में इकट्ठे किये, फिर मुझे पुछा, ''मम्मी ! मुझे इतने रूपयों में पारने का चढ़ावा मिलेगा?''

''नहीं ! इतने रूपयों में नहीं मिलेगा, इसके लिए लाखों रूपये चाहिए'' मेरे शब्दों का उसके उपर क्या असर होगा? ये सोचे बिना ही मैंने तो सीधा-सीधा उत्तर दे दिया। पर मैंने देखा कि मेरा उत्तर सुनने के बाद उसका मुँह उतर गया। वो स्कुल जाकर वापस आया, तब भी उदास था। मैंने जब पूछा, तो रोने लगा, ''मुझे प्रभुजी को घर पर लाना था....'' तब मुझे पता चला कि, 'उसको कितनी तीव्र भावना हैं।'

''साहेब जी ! हम सुखी है, पर ये आदेश तो यहाँ लाखों रूपये में जाता है'' बोलते बोलते वो बहन रोने जैसे हो गये। बालक उसकी मम्मी के सामने देख रहा था। उसको पता चल गया कि मम्मी मेरे लिए रो रही हैं।

''हम उसकी इच्छा पूरी नहीं कर सके, पर मेरे बेटे की इस भावना पर मुझे आज गर्व हैं। इतनी छोटी उम्र में उसको अपने पैसों से खिलोने लाने का मन नहीं हुआ, पर प्रभुजी को घर लाने का मन हुआ,'' उस वक्त बालक मम्मी की गोद में बैठ कर मम्मी की आँख पौछने लग गया।

''साहेब जी !'' उसके पापा ने बोलना शुरू किया,''जन्म वांचन के बाद सब पारणे को झुलाते है, पारणे में पैसा रखते है....मैं भी उसको लेकर पारणे के पास पहुँचा। और उसने अपने हाथ में प्लास्टीक का पैसे वाला डिब्बा रखा हुआ ही था। उसमें उपर से छोटे छेद में से पैसे डालते हैं। और नीचे बड़ा ढक्कन खोले, तो उसमें से पैसे निकाल सकते है.... उसने ढक्कन खोलकर फटाफट पैसा निकालने शुरू किये, परंतु जल्दबाजी में पैसे नहीं निकले, और धक्का-मुक्की होने से भी पैसे निकालने में मुश्कील हो रही थी, फिर भी ये तो इतना उल्लास में था कि जो भी नोट-सिक्के निकले, वो जल्दी-जल्दी पारने में डालता गया। उसकी इच्छा पूरा डिब्बा खाली करने की थी, पर पीछे भीड़ होने के कारण ज्यादा देर खड़े नहीं रह सके, इसलिए न चाहते हुए भी, उसकी जिद होने पर भी मुझे उसको लेकर वहाँ से हटना पड़ा।''

''साहेब जी ! अनुकूलता होगी, तब एकबार घर पर पारणा जी लाकर पुत्र की भावना पूरी करूंगा, आखिर उसने प्रभु का पारणा ही तो माँगा था ना ! कोई टी.वी. मोबाईल जैसे पाप साधन तो नहीं मांगे ना ! बड़े होने के बाद इन निमित्तों के बीच ये कैसा बनेगा, वो तो पता नहीं, पर अभी तो उसकी भावना पूरी करने की भावना है'' अब गद-गद होने की बारी इस भावनाशील धार्मिक पिता की थी।

(आपके घर में भी ऐसे पवित्र भाव वाले बालक भगवान जैसे विराजमान हैं। ये **भगवान में से हैवान-शैतान नहीं बन जाए** उसका ध्यान तो माँ-बाप को ही सच्चे श्रावक-श्राविका बनकर रखना हैं।)

गुणानुरागः गुणानुवादः गुणानुकरण

''मनुष्य ईर्ष्या, अहंकार, स्वार्थ आदि दोषों के परवश होने के कारण दूसरों के अच्छे गुणों को देखकर खुश नहीं हो सकता। शायद खुश हो जाए, तो मूढ होने से ये गुणों की प्रंशसा नहीं करता। शायद कभी प्रशंसा कर भी ले तो भी वो गुण अपने जीवन में उतारने का प्रयत्न नहीं करता।''

सबसे पहले जरूरी है **गुणानुराग**! मानसिक गुणानुमोदना....

फिर जरूरी है **गुणानुवाद**! वाचिक गुणानुमोदना....

फिर जरूरी है **गुणानुकरण**! कायिक गुणानुमोदना....

हमको इस चौमासे में ऐसा करना है कि जिस भी श्रावक-श्राविकाओं में गुण दिखते है, उनको हर रोज प्रवचन के बाद खड़ा करना, उनका गुण सबको बताकर उनकी अनुमोदना कर कम से कम 100 रू. से उनका वहीं पर बहुमान !

120 दिन है, रोज के 1-1 गिने तो 12,000 रू. का खर्च होता हैं। जिसको भी लाभ लेने की भावना हो वो मुझे बाद में मिलना।''

चातुर्मास के पहले गुजराती वाडी के प्रवचन में यह बात कहीं, पर मुझे राह नही देखनी पड़ी। तभी दो भाईओं ने कहाँ कि, ''साहेबजी ! इसके लिए 1 लाख रू. का खर्च करने के लिए हम तैयार है, यदि आप रोज दस-दस व्यक्तिओं का बहुमान कराओं, तो भी हमें कोई ऐतराज नहीं।''

एक थे त्रिस्तुतिक दिलीप भाई दुसरे थे विकासभाई !

दिलीपभाई 50 दिन के लिए पालिताना जा रहे थे इसलिए उनके हाथ से तो बहुमान नहीं करा सकते थे, इसलिए उनको मना बोलकर विकास भाई को यह लाभ

दिया।

रोज उनकी प्रवचन में उपस्थिति! कवर तैयार करके ही लाते और रोज अलग-अलग व्यक्ति के बहुमान का लाभ लेते।

एक बार उस करोड़पति युवान विकास भाई ने मुझे पूछा....

''साहेब जी! मैं रोज बहुमान करता हुँ, परंतु आपसे एक सम्मति लेनी है कि उनके चरण स्पर्श कर सकु? वो शायद उमर में छोटे हो, गरीब या मध्यमवर्गीय हो.... पर वो गुणवान है तो उनके गुणों की अनुमोदना के लिए उनके चरण स्पर्श करू तो कोई एतराज तो नहीं?''

''अरे, अच्छा विचार हैं। खुशी से कर सकते हो।''

सम्मति मिलने से वो खुश हुए।

उसके बाद तो श्रीपाल भवन के स्टाफ का बहुमान हो, जो कि नौकर थे, गरीब थे.... या फिर किसी करोड़पति का बहुमान हो....छोटे बालकों का बहुमान हो या युवान-वृद्धों का बहुमान हो.... उस सब को विकास भाई हर्षोल्लास के साथ पैर छुकर कवर से बहुमान करते।

''कुल कितने रूपये हुए? पन्द्रह हजार के आस-पास?'' चातुर्मास के बाद उनको पूछा।

''50 हजार के आसपास हुए....'' उन्होंने हंसते-हंसते जवाब दिया।

''बाप रे, इतने हो गये?''

''म.सा.! मैंने तो 1 लाख या उससे भी अधिक हो, तो भी तैयारी रखी थी। ऐसा लाभ मुझे कहाँ मिलेगा? ऐसे एक-एक गुणवान व्यक्तिओं के दर्शन दुर्लभ हैं। हमने उन सबको बहुत बार देखा हैं, जानते भी है.... पर आपने उनके गुणों का परिचय कराया, ये तो हमारे लिए इस चातुर्मास का लाभ हैं।''

35-40 वर्ष की उम्र के इस युवान श्रावक ने चैन्नई की धरती की महिमा दिखा दी।(बहनों का बहुमान होता, तो उनके श्राविका या पुत्री बहुमान करते।)

आत्मा पढ़ती है, उम्र नहीं

''इच्छकार सुहराई....'' संघ के ट्रस्टी दलीचंद जी गुरूवंदन के सूत्र अटकते-अटकते, याद करते-करते बोल कर वंदन कर रहे थे। इसलिए मेरा ध्यान उनकी तरफ गया। इस तरह अकेले वंदन करने पहली बार आए थे। पर्युषण के दिन थे।

''साहेबजी ! बराबर सुनना, मैंने बड़ी मुश्किल से याद किया है। भूल हो तो बताना....'' 63 वर्ष की उम्र के दलीचंद जी ने कहा और फिर '**अष्टभुट्ठिओ**' सूत्र चालु किया। धीरे-धीरे याद करके बोलते गये, दो-तीन भूल हुई, पर उन्होंने बहुत ही अच्छी मेहनत की थी।

''वाह रे वाह ! कब याद किया?'' मैंने पूछा।

''साहेबजी ! पर्युषण में व्याख्यान के बाद घर गया, विचार आया कि टी.वी. नहीं देखना। खाली बैठा था, तब पुस्तक हाथ में आया। देखकर इच्छा हो गयी कि कम से कम गुरूवंदन के सूत्र तो याद कर लुँ.... मेहनत रंग लाई और याद हो गया। पहला वंदन आपको ही किया।'' सफेद हो चुके बाल 'सफेद ना दिखे' इसलिए काली डाई करने वाले, रसोई का खाता संभालने वाले दलीचंद जी के चेहरे पर आज 62 वर्ष के बाद वंदन सूत्र कठंस्थ करने का इतना आनन्द था कि जैसे करोड़ो रूपया कमाया हो।

पर्युषण के दिनों में दोपहर को प्रवचन होता ही हैं। उस दिन दोपहर के प्रवचन के बाद बराबर सामने कुर्सी पर बैठे हुए दलीचन्दजी के सामने ईशारा करके मैंने कहाँ, ''ये है आज के बहुमान के पात्र, अपने ट्रस्टी महोदय ! जिसने गत दिवस मेहनत कर कर के अब्भुट्ठिओं सूत्र कंठस्थ किया हैं।''

''विकास भाई ! कवर तैयार है ना? ''

''हाँ जी !''

''दलीचंद जी !आगे आओ....''

''म.सा. ! मेरे जैसों का बहुमान नही किया जाता....'' उन्होंने खड़े होकर आगे आते आते कहाँ, उनके शब्दों में सच्चाई थी, ''मेरे तो 62 वर्ष पानी में गये कि मैं इतना भी नहीं सीख पाया।''

आगे आकर सभा के समक्ष खड़े रहकर चश्मा निकालकर आँखों के आँसु पोंछते पोंछते वो बोले ''मेरा सच्चा परिवर्तन तो पिछले चौमासे में पू.आ.भ. नवरत्न सागरसूरिजी से हुआ है, पर वो तो हमें छोड़कर चले गये, उनकी हाजरी में यह सूत्र याद कर लिया होता, तो उनको कितना आनंद होता ! मेरा बहुमान भले करो, **पर ये बहुमान**

तो मेरे उन गुरूदेव का ही गिना जाएगा, जिन्होंने मेरे अन्दर धर्म का बीज बोया।''

सभी की आँखों में आँसु थे। विकास भाई ने उनके चरणों को स्पर्श करके कवर से बहुमान किया।

(उम्र कोई भी हो, व्यक्ति चाहे तो पढ़ सकता है, कुमारपाल महाराजा ने 60 वर्ष की उम्र के बाद ही व्याकरण आदि का अभ्यास किया था।)

अजैन बंधुबेलडी

''हम सब बैंगलोर से आये है, आपको बैंगलोर पधारने की विनति करने! हमारे बड़े बुजुर्ग तो आएँगे ही, पर हम युवान पहले आए हैं। यहाँ से हम दावणगिरि जाएँगे। आज आपका व्याख्यान सुनेंगे।'' लगभग तीस-चालीस युवानों का ग्रुप वंदन करने आया था।

'आपका ग्रुप क्यां काम करता हैं?' मैंने पुछा।

''हम स्वाध्याय करते है, पढ़ते हैं।''

''क्या? स्वाध्याय?'' मुझे आनंद भी हुआ और आश्चर्य भी हुआ। स्वाध्याय मेरा मनपसंद विषय होने से मुझे आनंद हुआ। 'युवान भी पढ़ते है ऐसा संभव ही नहीं, ये तो सिर्फ प्रवृत्ति ही करते है....' ऐसी मन की धारणा होने से आश्चर्य हुआ।

''हा जी साहेब! पू. आ. भ. शीलचंद्र सूरिजी ने हमारे मंडल की स्थापना की है, और उनको स्वाध्याय बहुत ही प्रिय हैं। उनकी प्रेरणा से हम भी स्वाध्याय करते हैं।''

पू. आ. भ. की स्वाध्याय रूचि का अंदाजा था, इसलिए मुझे इसमें आश्चर्य नहीं लगा।

''म.सा.! हम सब तो जैन है, इसलिए स्वाध्याय करे तो आश्चर्य नहीं, परंतु हमारे ग्रुप में दो सगे अजैन भाई है, कन्नड़ भाषी हैं। पर उनको भी स्वाध्याय का रस लग गया हैं। रोज हमारे साथ एक घंटा पढ़ते हैं।'' उन भाई ने उन दो भाइओं की तरफ ईशारा करके उनके दर्शन कराए।

''क्या पढ़ते हो?''

''संसारदावानल तक पहुँचे है....''

''अच्छा....''

''साहेबजी! ये दोनों नहीं बोलेंगे, पर मैं ही आपको बता देता हुँ कि उनकी

आराधना क्या-क्या हैं?''

- वर्धमान तप की 11 के आसपास ओली हो गई हैं।

-चप्पल-बुट, जूते नहीं पहनते।

- चातुर्मास में चार महिने रात्रिभोजन का त्याग! उसके अलावा पांच तिथि को रात्रिभोजन अवश्य त्याग!

- पाँच तिथि पौषध भी करते है, पर्युषण में भी पौषध की आराधना करते हैं।''

उन दोनों भाईओं को वासक्षेप डाला, पू.आ.भ. ने तो सच में कमाल कर दिया।

(हमारे पास स्नात्र, बैंड, खिचडी घर, अनाथाश्रम, पांजरापोल.... वगैरह अनेक प्रकार के कार्य करने वाले अनेक ग्रुप है और ये सब अच्छा हैं। उसको हम गलत नहीं कहते, परंतु इन तमाम कार्यो में प्राणभूत तत्त्व जैसा जो विवेक गुण है, उसको लाने वाला जो स्वाध्याय हो, वो करने वाले ग्रुप कितने?

स्वाध्याय यानी मात्र गाथा पढ लेना वो नहीं.... परंतु सच्ची समझ देने वाले पदार्थो को जानना, पढ़ना वो भी स्वाध्याय....)

घर निर्वाह चरण लिए तेहना

''श्री ज्ञाताधर्म कथा नाम के आगम में बताया है कि श्री कृष्ण महाराजा ने ऐसी जाहेरात की थी कि, ''जो दीक्षा लेगा, उसके परिवार का भरण-पोषण मैं करूंगा।'' इस तरह उन्होंने दीक्षा लेने वालों की पीछे की चिंता दूर कर दी।

आजकल सही या गलत, लेकिन ऐसी व्यवस्था हो गई है कि दीक्षा लेनी हो,तो उसका (1) कम से कम एक तो वर्षीदान का वरघोडा निकलेगा। (2) संगीतकार और वक्ता के साथ एक धमाकेदार विदाई समारोह होगा। (3) कम से कम एक बार जीमण होगा।

इन तीनों का खर्चा तो जैसे अनिवार्य हो गया हैं।

इसके अलावा कपड़े-मंडप वगैरह के खर्चे तो अलग से! दीक्षार्थी परिवार सक्षम हो, तो वे बड़ी खुशी से, ठाठ से ये सब कर लेते है, पर पाँच-सात-दस लाख रूपये खर्च करने की शक्ति नहीं हो वे परिवार क्या करे?

इसके लिए चार विकल्प उनके पास रहते हैं :-

1. जब तक पैसा नहीं कमा ले, तब तक वे अपनी संतान को दीक्षा नहीं देते। दीक्षा आगे करने की इच्छा नहीं होती, पर उनको ऐसा करना पड़ता हैं।

2. अथवा तो किसी के पास उधार लेकर दीक्षा करते है, पर बाद में ब्याज के साथ उधार चुकाते-चुकाते बड़ी मुश्कील का सामना करना पड़ता हैं।

3. अथवा तो अपने धंधे में से अपनी पूंजी घटाकर दीक्षा करते है, उसके कारण दीक्षा के बाद पूंजी ही कम हो जाने से धंधा भी घटता ही है और कमाई कम होने से चिंता करते हैं।

4. अथवा वो बहुत ही सादगी से दीक्षा देते है, परंतु समाज के ताने सुन सुन कर हैरान हो जाते हैं। ''अपने लाडले-लाडली को हम ठाठ से दीक्षा नही दे सके,'' ऐसा सोचकर दुःखी होते हैं। दीक्षा में उनका उल्लास चिंताओं के कारण टूट कर बिखर जाता हैं।

जो श्रावक शक्ति वाले होते है, उनको ऐसे परिवारों की सहायता करनी चाहिए, यह उत्कृष्ट कोटी का लाभ है, क्योंकि :-

- दीक्षा दिलाने का लाभ मिलता हैं।

- वो दीक्षार्थी दीक्षा के बाद पूरी जिन्दगी जो आराधना करेगा, उसकी पूरी अनुमोदना का लाभ लाभार्थी को मिलेगा, क्योंकि उनकी दीक्षा में आप सहभागी बने।

- उसके पूरे परिवार की प्रसन्नता-शांति-खुशी-निश्चिन्तता देने का लाभ मिलता हैं।

इसलिए मेरी सबको भावपूर्वक और भारपूर्वक प्रेरणा है कि आप आपकी शक्ति अनुसार उसमें लाभ लेना।

इसका फंड जाहेर में नहीं होगा....

अकेले में यानि कि गुप्त तरीके से किसी को भी प्रेरणा नही करूंगा.... परंतु जाहेर में आपको पूरी बात समझा दी हैं। आपकी भावना के अनुसार आप मुझे मिल सकते हो।

अगर आप पूरी दीक्षा का लाभ लेना चाहते हो तो 10 लाख रू. का भी लाभ ले सकते हो, हर महिने 10,000 भरकर भी लाभ ले सकते हो.... इतनी भी शक्ति ना हो तो कम से कम 100 रू. से भी लाभ ले सकते हो। हमें आपके भावों का महत्त्व है, भाव से दिये हुए 100 रू. भी लाखों रूपये का काम करते हैं।

और हा !

आप पेढी पर या नरेशभाई आदि श्रावक को भी ये पैसे लिखा सकते हो, परंतु मैं चाहता हुँ कि आप मुझे मिलकर, बात करके बाद में, उनकों पैसे दो.... क्योंकि मुझे आपकी उचित अनुमोदना करके आपके भावों को शक्य हो उतना बढ़ाना है, यह काम

प्रायः ये श्रावक नहीं कर पाएँगे।

बहुत ही विस्तार से मैंने यह पूरा पदार्थ प्रवचन में समझाया। उसके बाद तो उपर फटाफट नाम आने लगे।

दीपकभाई पारसमलजी ने हर महिने 21000 लिखाए.... उनके सिवाय कितने ही लोगों ने हर महिने 10-10 हजार लिखाए, कितने ही लोग एक साथ ही एक लाख रूपये दे गये।

मैलापुर में रहने वाले अभिषेक भाई हमेशा सकारात्मक ही बोलते है, ''म.सा.! सब हो जाएगा, आप चिंता मत करो, हम बैठे है ना, कुछ ना कुछ तो हो ही जाएगा'' और उन्होंने भी इसमें सक्रिय भाग लिया।

सबसे बड़े आश्चर्य की बात तो यह थी कि जिनके पास बहुत पैसा है, ऐसे बहुत कम लोगों ने इसमें लाभ लिया.... कारण? पता नहीं, शायद सोचे तो।

(1) इसमें देने वाले का बहुमान-तिलक-वाह वाह नहीं होगी।

(2) इसमें देने वाले का नाम नहीं बोलने वाले थे। कोई भी प्रकार की दिवार पर तख्ती भी नहीं लगाने वाले थे।

(3) मैंने श्रीमंतो की प्रशंसा नहीं की थी।

(4) सबसे बड़ा कारण, ''मेरा पुण्य कम होगा।''

पर इसमें तो मुझे महान लाभ मिला। इन छोटे-छोटे व्यक्तिओं के उत्कृष्ट भावों को पढ़ने का-जानने का सुनहरा लाभ मिला।

मैं साहुकारपेट के भावुक आत्माओं के आकाश को छुने वाले भावों की बारबार अनुमोदना करता हुँ, वंदन करता हुँ इन भावों को.... जिन भावों को देखकर मेरा सम्यग्दर्शन निर्मल बना हैं, इस संघ के प्रति मेरा भाव-आदर भाव बहुत ज्यादा बढ़ा हैं।

कुछ छोटे-छोटे प्रसंग लिख रहा हुँ:-

मुझे विश्वास है कि, ''इन दानवीरों के भावों को मैं वास्तविक रूपसे बता नहीं पाऊँगा और पढ़नें वालों को इसका सच्चा अनुभव नहीं करा पाऊँगा.... इसलिए ही मुझे मेरी इस कमी पर खेद भी हैं।''

पर इसमें मेरी कमी से भी ज्यादा दोष उनके भावों की ऊँचाई में हैं। ये भाव यदि इतने ज्यादा ऊँचे नहीं होते, तो मेरी वर्णन शक्ति की मर्यादा में होते और फिर तो पक्का इसका सच्चा अनुभव सबको कराता। इसलिए 'सॉरी' कहकर ही प्रसंगों का वर्णन शुरू करता हुँ।

(1) ''म.सा. ! इतने रूपये चलेंगे? आप लोंगे? ज्यादा नहीं है मेरे पास?'' एक साधर्मिक दिखने वाले बहन ने मुझे वंदन करके धीरे से विनंति की।

वंदन करने आए दूसरे दो-पाँच लोग उनके पीछे थे, इसलिए उनको सुनाई ना दे इसलिए वो धीरे बोले और अपने हाथ में पकड़ी हुई रकम 'वो लोग देख ना ले' इसलिए, सिर्फ मुझे ही दिखे उस प्रकार उन्होने हाथ में पकड़ कर दिखाया।

मैंने ध्यान से देखा, तो ख्याल आया कि, ''उनके हाथ में सिर्फ एक ही नोट थी और वो थी 1 हजार रू. की !''

45 के आसपास की उम्रवाले उन बहन की आँखों में दर्द के आँसु थे, कोई अजब कोटि के भाव थे।

मैंने पीछे खडें लोगों को थोड़ा दूर जाने को कहाँ, जिससे उस बहन का संकोच दूर हो।

''बहन ! आप 1 रूपया दोंगे, तो भी चलेगाा और मैं लूंगा भी !आप चिंता मत करो। आपके आंसु आपके अंदर के भावों को प्रकट कर रहें हैं।'' मैंने उनकी अनुमोदना की और 'मात्र 1 हजार रूपये देना क्या उचित हैं?' ऐसे उनके संकोचभाव को मात्र 1रूपया लेने की तैयारी दिखाकर मूल से उखाड फेंका।

''समय का खेल है म.सा. !'' वो बहन ने अपना भूतकाल कहना शुरू किया, ''एक दिन ऐसा भी था कि मैं खुद मुमुक्षु थी। दीक्षा लेने की तडप मेरे अन्दर भी थी, पर परिवार ने मना किया और में भी ढीली पड गई और मेरी शादी हो गई।

साहेबजी ! मेरे पीयर वालों ने छरी पालित संघ निकाला हुआ है और मेरे ससुराल वालों ने भी छरी पालित संघ निकाला हुआ हैं। पर कर्म का गणित एक जैसा कहाँ चलता है? दोनों पक्ष अब खत्म हो गए, बहुत मुश्कील से चल रहे हैं।

मेरी लड़की की शादी हो गई है, एक लड़का सी.ए. कर रहा हैं। घर पर सास-ससुर है, पति नौकरी करते हैं। घर खर्च चलाने के लिए मैं भी सिलाई का काम करती हुँ, उसमें जो कमाई होती है, वो घर पर काम आती हैं। लड़का सी.ए. बनकर अच्छा कमाए, उसकी राह देख रहीं हूँ।

आपकी बात सुनी, तब से मन में बहुत इच्छा हुई कि मैं तो दीक्षा नहीं ले सकी। इतनी शक्ति भी नहीं कि किसी की पूरी दीक्षा का लाभ ले सकु, परंतु कम से कम मेरी छोटी सी बचत में से हजार रूपये तो दुँ , और उसी भावना से आपके पास आई हुँ। म.सा. ! किसी को भी मत बताना ! पास में रहे मुमुक्षु भाई को दे कर जाती हुँ, शाता में

रहना, आशिष देना कि मेरे जीवन में भी दीक्षा उदय में आएँ।''

और आँखों को पोंछते उस बहन ने विदाई ली, बाहर खड़ी बहने उनको रोते हुए देख ना ले, इसलिए आँखे पोछनी जरूरी थी।(25-30 वर्ष पहले की संयम भावना इतने वर्षो तक आत्मा में जीवंत रही, मरी नहीं और इसलिए ही ये दबी हुई जीवंत भावना आज बहार प्रगट हुई।)

2) ''साहेबजी! आपको याद है? कि आपने मुझे 1 लाख रू. दिलवाये थे,'' 22 वर्ष की उम्र के एक बहन ने मुझे पूरानी बात याद दिलाई।

''हा! पर उसका अब क्या?'' उस बहन का परिवार अत्यन्त खानदान था, मुश्कीले बहुत थी , पर हाथ फैलाकर सहायता लेना ये उनके खुन में नहीं था। सिर्फ एक बार गुरू के सामने मन हल्का करने के लिए रोए थे। उनकी आवश्कता जानकर और मैलापुरवाले अभिषेक भाई ने साधर्मिकों के लिए 3 लाख दिये थे वो भी पड़े थे उसमें से एक लाख रू. दो महिने पहले उनको दिये थे।

''म.सा.! वो 1 लाख रूपया ऐसे ही पड़ा है, अभी तक उसकी जरूरत नहीं पड़ी हैं। हमारी जो कमाई है उससे खाने-पीने का तो चल जाता हैं, ये तो अचानक कोई खर्चा आ जाए तो ही मुश्कील होती हैं।

पर साहेबजी! हमको तो तकलीफ होगी तब देखेंगे, पर जब आपने प्रवचन में कहाँ कि 8 परिवारों ने आपके पास अपने स्वजन की दीक्षा के लिए समस्या बताई है यानी की उनको तो तकलीफ आ ही गई हैं।

आप मेरी बात का मना मत करना, मुझे लाभ दो, 1 लाख रू. उनकी दीक्षा में खर्च करने के लिए में वापस दे देती हुँ।''

''फिर आप क्या करोगे? आपको जरूरत पड़ेगी तो?''

''साहेब जी! मैं लाभ लुंगी तो मुझे पुण्य नहीं बँधेगा? इस पुण्य से मेरी सारी आने वाली मुश्कील भी हल हो जाएगी। समझो कि कोई तकलीफ आए तो आपके पास सामने से मांगने आऊँगी।'' हृदय से बोले हुए ये शब्द थे।

मुझे याद आया, जब उनको 1 लाख रूपये जबरदस्ती दिये थे, तब भी दूसरे दिन ऐसा कुछ हुआ था। उन्होंने वो1 लाख-रू. अनाथाश्रम में देने की तैयारी कर ली थी। इन सबका दिमाग ऐसा है कि, ''घर जला कर तीर्थ यात्रा करे....'' तब भी उनको ठपका देकर रोकना पड़ा था।

मुझे इस बात का आनंद है कि 'ये ऐसे साधर्मिक परिवार है जिनको सहायता

करने में भी जबरदस्ती करनी पड़ती हैं और मिली हुई सहायता को कोई धर्म क्षेत्र में खर्चा ना कर दे, इस लिए उनको ठपका देना पड़ता है, कसम देनी पड़ती है, रोकना पड़ता हैं।'

मुझे फिर से ठपका देकर उनको उनके 1 लाख रू. दीक्षा खर्च में देने से रोकना पड़ा, ऐसे समय में क्रोध पूर्वक, कडकाई से बोलकर मेरा काम आसानी से करा देता हुँ।

3)''साहेबजी ! ये मेरे दो बेटे है, उनको वासक्षेप करोगे?'' एक माँ ने अपने बेटों को आशिर्वाद दिलाया, पर मुझे लगा कि, ''ये कोई दूसरे ही काम के लिए आए है'' और मेरी धारणा सच हुई।

आठ और दस वर्ष के उमर के ये मेरे दो मासूम बच्चों ने मुझ से कहा कि, ''मम्मी ! हमारे जो रूपये है वो दीक्षा के खर्च के लिए दे दो''इसलिए इन दोनों के रूपये उनके ही हाथों से दिलाने के लिए दोनों को लेकर आई हुँ।''

मुझे खुशी तो हुई, पर विश्वास नहीं हुआ। मुझे लगा कि, 'मम्मी तो भावुक है ही। इन्होंने ही दोनों बच्चों को चढ़ा दिया होगा। छोटे बालक तो माँ जैसे कहे, वैसे कर लेते है, पर अन्दर से उनकी इच्छा शायद ना हो।''

''देखो बहन !'' मैंने उन बहन को ही कह दिया, ''आप जबरदस्ती इन बच्चों को समझा-बुझा कर पैसे दिलाओ, उसमें आपका तो भाव अच्छा, पर इन बच्चों को अच्छा ना लगे ऐसा क्यों करना?''

''ना-ना.... म.सा. ! ऐसा बिल्कुल नहीं।'' खुद पर जैसे कोई बड़ा चोरी का आरोप आ गया।

इस तरह से आश्चर्य चकित होकर उस बहन ने कहा ''मुझे उनसे बात करके तो पांच-सात दिन हो गये, मैं तो भूल गई थी। आज इन दोनों बालको ने सामने से मुझे याद कराया कि, ''मम्मी! आपके कहे अनुसार हमारे 20,000 हमको दीक्षाखर्च में देने हैं। तो आप हमें म.सा. के पास लेकर जाओगें ?'' साहेबजी ! पुत्रों की इस भावना को देखकर मैं बहुत खुश हुई और आज ही आपके पास लेकर आयी। पूछ लो उनको....''

बहन ने अपने उपर लगे आरोप को दूर करने के लिए जोरदार प्रयास किया।

इस तरह से आश्चर्य चकित होकर उस बहन ने कहा ''मुझे उनसे बात करके तो पांच-सात दिन हो गये, मैं तो भूल गई थी। आज इन दोनों बालको ने सामने से मुझे याद कराया कि, ''मम्मी ! आपके कहे अनुसार हमारे 20,000 हमको दीक्षाखर्च में देने हैं। तो आप हमें म.सा. के पास लेकर जाओगें ?'' साहेबजी ! पुत्रों की इस भावना को देखकर मैं बहुत खुश हुई और आज ही आपके पास लेकर आयी। पूछ लो उनको....''

बहन ने अपने उपर लगे आरोप को दूर करने के लिए जोरदार प्रयास किया।

मुझे उन बालको से कुछ भी पूछने की जरूरत नहीं लगी, फिर भी एकबार कह दिया कि, ''देखो, आप 10 हजार दो और 10 हजार अपने लिए रखो। आपको कुछ लाने को काम आएँगे। पूरे दे दोगे, तो फिर आपकी इच्छा पूरी नहीं होगी।''

''पर हमको तो पूरे ही देने है'' दोनों मासूम भगवानों ने जवाब दिया।

''याद रखना, मम्मी पापा तुम्हें कुछ नहीं दिलाएँगे।'' मैंने उनको डराया।

''चलेगा....'' दृढ़ जवाब मिला।

और हर्ष से भरी धार्मिक मम्मी के नजर सामने दोनों बालको ने अपनी संपूर्ण कमाई नरेश भाई के हाथ में अपने हाथों से देकर परम संतोष का अनुभव किया।

4) ''भाई ! अभी हमारा पाठ चल रहा है, आधा घंटा लगेगा, कुछ विशेष काम है ?'' मैंने आनेवाले भाई को पूछा। हमारा पाठ चल रहा था और वे रूम में आ गये थे।

मुझे बगैर कारण उनका आना अच्छा नहीं लगा।

1) उन भाई के कारण हमारा पाठ बिगड़े ये मुझे पसंद नहीं था।

2) वो भाई गरीब साधर्मिक जैसे लगे, ऐसे साधर्मिक सहायता मांगने आते है और मुझे ये अच्छा नहीं लगता, क्योंकि मैं नहीं दिला सकता।

इसलिए ही मेरे प्रश्नों से ही मेरी अनिच्छा प्रकट हो गई थी।

''कोई बात नहीं, साहेबजी ! इंतजार करता हुँ।'' ऐसे कहकर वो भाई रूम के बाहर चले गये। आधे घंटे बाद पाठ पूरा हुआ, साधु बाहर निकल गये। मुझे लगा, वो भाई चले गए हों,गे पर जैसे ही साधु बाहर निकले, तुरंत ही वो भाग्यशाली

अन्दर आए, मेरा चेहरा बिगड़ गया।

मेरे सद्भाग्य से(!) मुझे मिलने के लिए दूसरे भी कुछ लोग आकर खड़े थे। मुझे उस गरीब(!) भाई को मिलने या बात करने में कुछ तकलीफ नहीं थी, परंतु वे पैसा मांगेंगे तो ? इस भय के कारण ही मैं उन्हें नहीं मिलना चाहता था।

और इसलिए ही आधे घंटे से बैठे होने पर भी उनको जान-बुझकर टालकर पीछे से आए व्यक्तिओं को मिलने के लिए बुलाया.... एक के बाद एक सब चले गये। उसमें आधा घंटा निकल गया। मैंने देखा कि वो भाई रूम के बाहर खड़े राह देख रहे है.... उनके चेहरे पर जरा भी चिंता नहीं थी। 'उन पर अन्याय हो रहा है', ऐसा जरा सा भी विचार नहीं था।

मुझे लगा कि, "मुझे उनके साथ बात करनी ही पड़ेगी, उसके बिना वो नहीं जाएँगें।" इसलिए मैंने उन्हें अंदर बुलाया, और थोड़ी टेढ़ी आवाज में पूछा, "बोलो भाई ! क्या काम हैं ?"

"दूसरा कुछ नहीं साहेबजी!" सीधी-सादी भाषा में वो भाई बोले "आपके प्रवचन में सुन,ा तो दीक्षा खर्चे में लाभ लेने की इच्छा हो गई। 1 लाख 20 हजार लेकर आया हुँ, किसको दुँ?" साधर्मिक दिखने वाले वो भाई के ये शब्द सुनकर मुझे बहुत ही शरम आयी।

अब मुझे ख्याल आया कि वो भाई एक घंटे तक लाईन में खड़े रहे। वो भी पैसे लेने के लिए नहीं, पर पैसे देने के लिए....

असल में तो पैसे लेने वालो को गरज होती है। **उसके बदले यहाँ तो पैसे देने वालों को जैसे गरज थी**(आखिर सच्चा दान तो यही है ना।)

"पास वाली रूम में मुमुक्षु है, उनको दे दो....वो बाद में नरेश भाई को दे देंगे, और सुनो, आपका नाम क्या हैं ?"

पर वो भाई नाम कहने या लिखाने के लिए खड़े नहीं रहे। चोर चोरी करके जैसे भागता है, वैसे ही वो भाई भाग गए।

ऐसे दानवीर इस चेन्नई के लोग है.... ये कैसा आश्चर्य हैं ?

(किसी के भी बाहरी रूप वगैरह से जल्दी कोई निर्णय नहीं लेना। वैसे भी किसी के साथ भी अरूचि से व्यवहार करना तो अनुचित ही है ना !)

5) "म.सा. ! हमको 1 लाख रू. दीक्षाखर्च के लिए देने है," बीसेक वर्ष की उम्र

के दो बहनों ने अपनी भावना बताई, दोनो चचेरी बहने थी।

''रूपये किसके हैं ? मम्मी-पापा को पूछा ?''

''मुझे कश्मीर लद्दाख घूमने जाने की इच्छा वर्षो से हैं। मेरी भावना थी कि अपने खुद के पैसों से घूमने जाऊ! पापा के पास पैसे तो है, कमी नहीं है, पर अपने खर्च से जाना था, इसलिए पिछले पांच वर्षो से ये लाख रूपये इकट्ठे किये हैं। इस वर्ष मैं घूमने जाने का सोच ही रही थी, तभी व्याख्यान में आपकी बात सुनी।

विचार आया कि मेरे घूमने जाने का नहीं होगा तो कुछ फरक नहीं पड़ेगा, पर मेरे रूपये किसी की दीक्षा में काम आएँगें तो उसमें मुझे भी पुण्य मिलेगा ना।''

''पर फिर आपको लद्दाख घूमने जाने को नहीं मिलेगा।''

''अभी नहीं मिलेगाऐ पर शादी के बाद तो मुझे मेरे पति घूमने लेकर जाएगे ना। और नहीं जाने को मिलेगा तो भी मुझे कोई भी दु:ख नहीं होगा।

ये मेरी चचेरी बहन है, उनके पास भी 20 हजार उसके अपने इकट्ठा किये हुए हैं। ये भी लाभ लेना चाहती हैं।''

मेरा तो उनको ना कहने का प्रश्न ही नहीं था।

(उन बहन का नाम तो याद नहीं, पर लोगो में उनका नाम ''लद्दाख वाली'' तरीके से ही प्रसिद्ध हो गया। उनके पिताजी वसंतभाई का अत्तर की बोतल का धंधा! सुखी परिवार! एक लाख उनके लिए बहुत बड़ी रकम नहीं थी। पर कींमत रकम की नहीं, लेकिन मौज शोक के शौकीन नयी पीढी को अपनी इकट्ठी की हुई रकम इस तरह देने की इच्छा हुई, ये उनकी गुणवत्ता ही बहुत बड़ी कीमत हैं।)

6) 'म.सा. ! मुझे दीक्षा के लिए 40 हजार रू. देने है' अपने श्रावक को साथ लेकर आए एक बहन बोले।

''ऐसे तो उनको इस बार टू-व्हीलर(स्कूटर) दिलाना था, हमारा घर उपाश्रय से दूर है और ये शरीर से असक्षम है, बहुत ज्यादा नहीं चल सकते। बार बार रिक्शे में आना जाना तो उल्टा ज्यादा महंगा पड़ता है, इसलिए ये कब से कह रही थी कि मुझे एक्टीवा दिला दो।'' श्रावक ने बातचीत की डोर अपने हाथ में ले ली थी।

मैंने भी उनको सम्मति दे दी थी, पर पैसों की व्यवस्था तो करनी पड़ती है

ना ? पर अब इन्होंने जिद्द बदल दी हैं। ये कह रहे है कि, ''मुझे एक्टीवा नहीं चाहिए, आप ये रूपये दीक्षाखर्च के लिए दे दो....''

''तो फिर इनको आने-जाने में तकलीफ नहीं होगी ?'' मैंने पूछा।

''म.सा. ! जो तकलीफ होगी, वो सह लूँगी।'' बहन ने दृढ़ता से जवाब दे दिया।

''देखो, साहेबजी ! ये सब होशियार होती हैं। इनको पता है कि ये परेशान होंगे, तो इनको देखकर मैं उनको एक्टीवा दिला दुंगा, इनके तो दोनों काम हो जाएँगे, दीक्षा का लाभ भी मिल जाएँगा और एक्टीवा भी....''

श्रावक ने हँसते-हँसते कहा। जैसे की वे भविष्य वाणी कर रहे थे, अपने वर्षो के अनुभव के आधार पर !

''देखो म.सा. ! ये 40 हजार इनके अकेले के नहीं हैं। इसमें से थोड़े तो मेरी अपनी बचत के है, थोड़े मुझे पीयर से मिले हुए हैं।'' बहन ने अपना और पति का हिसाब अलग करके बताया, संसार में सबका अपना-अपना स्वार्थ है, ऐसा वो बता रहे थे।

''साहेबजी ! इन्होंने बचत करी, उसमें क्या ? पैसे तो मेरे पास से ही लिये। उसमें से बचाये और अब ये कहते है कि ये पैसे इनके है.... म.सा. ! अब ये बात छोड़ो, इनकी इच्छा है और मेरी भी सम्मति है, आखिर उनको अच्छी भावना ही हुई है ना, इसलिए आप मुझे ये लाभ दो।'' पति न मजाक में कहा।

हमारी दीक्षा खर्च की तिजोरी इस तरह छोटी-मोटी रकम से भर रही थी।

7) ''बोलो, 2 जोड़ी से ज्यादा कपड़े नहीं रखने.... कौन तैयार है ?'' जुना मंदिर शिविर में मैंने सबके सामने अपरिग्रह के लिए बात की।

''चार जोड़ी ?'' दो जोड़ी में कोई तैयार नहीं होने के कारण मैंने संख्या बढ़ा ली। एक-दो लोगों ने हाथ ऊँचे किये।

''चलो, छह जोड़ी ?'' फिर चार-पांच हाथ उपर हुए।

ऐसे पन्द्रह, बीस, तीस, चालीस, पचास जोड़ी तक मैंने हाथ उपर करवाकर अंत में सबको नियम दिया।

दुसरे दिन एक घटना घटी,

पचासेक वर्ष की उम्र के एक बहन मिलने के लिए आये, वंदन करके

सीधे रोने ही लगे।

"क्या हुआ बहन ?"

"म.सा.! आपने कल शिविर में कपड़ो के परिग्रह कम करने की प्रेरणा की थी, मैं भी शिविर में आयी थी। मुझे कपड़ों का बहुत शौक है, गहने के लिए मुझे राग नहीं। पर साड़ी तो खरीदती रहती हुँ, घर पर ढेर लग गया हैं।

साहेबजी! कल आपने अंत में 50 जोड़ी का नियम दिया, तो भी ये नियम लेने के लिए भी मेरा मन तैयार नहीं हुआ, इसलिए मैंने नियम नहीं लिया। उसके बाद घर जाकर बहुत विचार किया, मुझे आपके शब्द याद आये कि, "आप सब तो मात्र एक ही जोड़ी कपड़े रखते हो, फटने पर दूसरे लेते हो...." और मुझे अपने आप पर धिक्कार होने लगा, मुझे बहुत रोना आया। फिर भी नियम लेने की हिम्मत नहीं हुई।

साहेबजी! अंत में एक निर्णय किया कि, "मैंने थोड़े दिनों पहले ही मेरे कुछ गहने बेच दिये है, मुझे गहनो का शौक नहीं। उसके 50 हजार रू. आए है, मैं थोड़े ही दिनों में उससे नये कपड़े लाने वाली थी।"

पर अब ये निर्णय कर लिया है कि, "भले 50 जोड़ी का नियम ना ले सकु, परंतु इतना तो कर सकती हु कि ये 50 हजार रू. मैं दीक्षा के खर्च के लिए दे दू! बस, इस बार मैं इन रूपयों से मेरे लिए कपड़े नही खरीदुंगी।"

"शाबास बहन! आपकी पश्चात्ताप की भावना को! आपका नाम लिखा देना...."

"साहेबजी! ये तो मेरे वस्त्रों की ममता के पाप का प्रायश्चित्त ही है, मेरे जैसी पापी का नाम लिखवाना ही नहीं चाहिये।" और ये बहन मेरी बात माने बिना ही नरेश भाई को पैसे देकर रवाना हो गए।

8) "किलपाक से वंदन करने आये है, आपकी पुस्तक पढ़ी, इसलिए वंदन करने की भावना हुई," दो बहनों ने बताया। उनके रूमाल के उपयोग से पता चल गया कि वो बहन स्थानकवासी हैं।

"कौनसी पुस्तक पढ़ी ?"

"संयमीओं के परिवार की भक्ति करने संबंधी पुस्तक! भगवंत! आपने तो कमाल कर दिया। हमने तो कभी ये वस्तु सोची भी नहीं थी। मैं बहुत साधर्मिक

परिवारों को सहायता करती हुँ, परन्तु संयमीओं के परिवार के लिए तो कभी भी विचार नहीं आया।''

मैंने फिर मेरे तरीके से इस चीज को थोड़ा विस्तार से समझाया।

''भगवंत! मेरी भावना है कि संयमी परिवार के लिए 1 लाख और दीक्षाखर्च के लिए 1 लाख रूपये देने हैं। हम साथ में लेकर ही आये है'' कहकर उन्होंने दो बंडल निकाले।

भाई लाखों का दान करते है, ये तो देखा है.... यहां तो बहने लाखों का दान करने निकली थी।

मैंने आवाज लगाकर नरेशभाई को बुलाया, आते ही वो सब समझ गये। पूरे चौमासे में खजांची का काम ये करोड़पति श्रावक ही कर रहे थे।

''भगवंत! इसके साथ ये एक सोने की चेन भी देनी थी।'' उन्होंने एक मोटी सोने की चैन बेग में से निकालकर नरेशभाई के हाथ में दी।

''और ये सिक्के देने है'' कहकर उन्होंने बेग में से पचासेक जितने बड़े-बड़े चांदी के सिक्को का ढ़ेर करके नरेश भाई को दिये।

''इन सब का उपयोग इन दोनो काम में करना।''

उन बहनों का उत्साह अपार था।

मैंने उनकी उदारता के लिए धन्यवाद दिया, तब उनके साथ आए बहन बोले....

''भगवंत! आंप इन सुशीला बहन को जानते ही नहीं, मैं आपको पहचान कराती हुँ....''

सुशीला बहन उनको रोकने लगे, परंतु उनके गुणों के प्रति गाढ अनुराग वाले उस बहन ने सुशीला बहन की गुणवत्ता दिखा ही दी, वो रूके नहीं।

* पिछले 15 वर्षो से अखंड एकांतरे उपवास करते है (लगभग 2500 के आसपास उपवास....)

* चेन्नई में किसी के यहाँ अट्ठाई-श्रेणीतप-सिद्धितप-मासक्षमण आदि विशिष्ट तपस्या होती है, तब अगर उनको पता चले कि ये परिवार मध्यम वर्ग वाला है.... तो किसी भी तरह के संबंध के बिना ही पारने के दिन तपस्वी के यहाँ पारना कराने पहुँच जाते है और अपने घर से ही पारना के लिए 15-20 आईटम बनाकर लेकर

जाते है और पारना कराते हैं।

ऐसा एक दिन नहीं, तीन दिन तक करते हैं।

मैं तो सुखी परिवार की हुँ, फिर भी जब उनको पता चला कि, "मैंने तबीयत बिगड़ने के कारण उपवास करके पारना किया है" तब उन्होंने ही मेरे पारने को संभाल लिया। इनको सब पता है कि क्या खाना ? कितना खाना.... ? वगैरह!

मेरा इन बहन के साथ इस तरह ही परिचय हुआ है, बाकी मैं तो इनको जानती भी नहीं, मैं मूर्तिपूजक हुँ और ये स्थानकवासी हैं।

तीनों दिनों तीनों समय का खाना इस बहन ने अपने घर से पहुँचाया।

* तपस्वी के घर पर पानी का एक बुंद भी नही पीते....

* वो परिवार मध्यम या जघन्य कोटि का हो तो सुठ, पिपरामुल, गुंद वगैरह पौष्टिक महंगी वस्तुए उनके घर पर बहुमान के बहाने पहुँचाते है, जिससे तपस्वी पांच-छः दिनों तक शक्तिदायक वस्तुओं से पारना कर सके।

* स्थानकवासी, मूर्तिपूजक, तेरापंथी या दिगम्बर.... कोई भी संप्रदाय में दीक्षा हो, मुमुक्षुओं की सब उपधि का अपने खर्चे से लाभ लेने की इनकी हमेशा तैयारी ! एक साथ 50 दीक्षा हो तो भी सबकी छाब(उपधि) तैयार करने में सक्षम है, मात्र पात्रा की जोड़ी के लिए तकलीफ होती है, क्योंकि एक साथ इतनी पात्रा जोड़ तैयार नहीं मिलती हैं। तो भी अभी भी इनके पास तीन पात्राजोड तो तैयार ही हैं। लाखों रूपये का खर्च ये उपधि के लिए करते हैं।"

वो बहन इतने उल्लास के साथ सुशीला बहन की अनुमोदना कर रहे थे कि बोलते-बोलते उनकी आंखों में से हर्ष के आंसु बहने लगे।

"भगवंत ! ये सब करने पर भी दीक्षा लिये बगैर मेरा कल्याण नहीं होगा।" अचानक सुशीला बहन गंभीर होकर बोले, "ये सब बाहर के काम हैं। इसमें तो मान कषाय भी होता है इसमे क्या खुश होना ?"

"दीक्षा लेने की भावना है ?"

"है, पर अब 50 साल से अधिक उम्र हो गई हैं। दीक्षा ले तो लुंगी, पर फिर शरीर काम नहीं करेगा, तो !"

'वैसे तो आपकी "मने वेष श्रमणनों मलजो रे" पुस्तक मैंने पढ़ी, उससे मेरा उत्साह बढा कि, 'एकबार भी सच्चा चारित्र स्पर्श हो जाए, तो ये भव सफल है'

पर मेरे जीवन में दीक्षा उदय में आएगी या नहीं.... वो पता नहीं....''

सुशीला बहन उदास हो गये, उनकी उदासी के पीछे दीक्षा के लिए उनकी तीव्र लगन दिख रही थी।

आखिर उन दोनों बहनों ने विदाई ली।

पर इसके बाद कुछ-कुछ दिनों के अंतराल में वो कुल तीन बार मिलने आकर गये, और 'ये तीन बार क्यों आ' ए वो भी आपको बताता हुँ।

* एक करोडपति बहन के यहाँ लड़के की शादी थी। सुशीला बहन उनको लेकर आए। उस बहन ने कहा, ''पहले तो हजारो-लाखों रूपये होटल-घूमने-फिरने में चले जाते, पर इनके संपर्क में आने के बाद ये सब छोड़ दिया हैं। अभी घर पर लडके की शादी है, तो भी एक भी जोड़ी नये कपडें नहीं खरीदें, अब इस संसार में रस रखकर क्या मतलब?

इस बहन ने मुझे संयमी परिवार की और दीक्षा खर्च की बात की, वो मुझे बहुत ही अच्छी लगी। इसलिए 1 लाख रू. का लाभ लेने आयी हुँ।''

* सुशीला बहन दूसरे एक बहन को लेकर आए। उस बहन ने कहा, ''मैं तो मदुराई से आई हुँ। इस बहन ने आपकी बाते की थी। अत: 55 हजार का लाभ लेने की इच्छा हुई हैं।''

* जिन्होंने सुशीला बहन के गुण बताए थे, उस बहन को उनके पति के साथ सुशीला बहन लेकर आए, सबको मुझे दो-पांच मिनिट इन दो विषयों पर उपदेश देना पड़ता। सुशीला बहन का आग्रह था ही कि, ''मैंने तो इनको समझाया है, पर आप भी समझाना....''

वो भाई भी 1 लाख रू. लेकर आए थे।

मुझे ध्यान है तब तक लगभग छ: लाख रू. उस बहन ने ही इस तरह दिला दिये। उन्होंने ये दोनो काम अपने समझ कर उठा लिये थे।

उनके शब्द ''म.सा.! आपके जैसे मैं भी कभी किसी को आग्रह नहीं करती, सिर्फ पदार्थ समझा देती हुँ। फिर उनकी इच्छा हो, तो वो आगे से आकर मुझे बोलते हैं।''

(९)''म.सा.! एक काम है'' एक 20 वर्ष की उम्र की बहन ने रूम के बाहर से कहा। मैं, न्याय म.सा. और शीलगुण म.सा. तो उस दिन आराधना भवन में हाजिर

नहीं थे। हम चातुर्मास का क्षेत्र देखने के लिए कुरूक्कपेट गये थे। भुवनभूषण म. और हेमगुण म. उस वक्त गोचरी वापर रहे थे।

"क्या काम हैं?" भुवनभूषण म. ने अन्दर से ही पूछ लिया।

"दीक्षा के लिए पैसे देने हे।" रसना बहन ने कहाँ।

तारीख 8नवम्बर के दिन प्रधानमंत्री श्रीनरेन्द्र मोदी ने 500-1000 की नोट रद्द करने की घोषणा की थी, उसके कुछ दिनों बाद का यह प्रसंग था। अब सब के लिए ये 500-1000 की नोट बिना काम की हो गई थी। सब लाईन में खड़े होकर ये नोट बैंक में जमा कराकर 2000 रू. की नयी नोट ले रहे थे।

हम सब ने नजरों से दृश्य देखा कि बैंक के बाहर लंबी लाईन लगती। लोग दो-चार घण्टे तक लाईन में खड़े रहकर रोज-रोज इस तरह पूरानी नोट देकर नये नोट ले रहे थे।

जिसको धर्म संस्थाओं में पूराना दान देना बाकी था, वो अब आगे से लाखों रू. इन दो पूरानी नोटों के द्वारा देने को तैयार थे। पर धर्म संस्थाएँ अब इन नोटों को लेकर क्या करें?

इसी तरह लेनदार भी जल्दी पैसा देकर लेनदारी से मुक्त होना चाहते थे। वे बोल रहे थे कि "अब ये लेना हो तो लो, बाद में कोई गारंटी नहीं।"

सब उदास थे, लेनदारी करने वाले अब ये दो नोट लेने को तैयार नहीं थे.... कारण सब जानते हैं।

भुवनभूषण म. को लगा कि, "ये बहन भी पूराने नोट दीक्षाखर्च के लिए देने आये हैं।" और इस तरह बहुत सारे देकर गये थे। नरेशभाई, कैलाशभाई इसकी व्यवस्था भी कर देते थे। जिस दीक्षार्थी परिवार को जरूरत होती, उनके एकाउन्ट में पैसे भर देते। उन सबको तो ढाई लाख अपने एकाउन्ट में भरने में कोई समस्या ही नहीं थी। इसलिए दीक्षाखर्च या संयमी परिवार की योजना के लिए तो ऐसी 500-1000 की बहुत सारी नोट आए तो भी कोई दिक्कत नहीं थी। किसी एक ही एकाउन्ट में लाखों रू. भरने शक्य नहीं थे। यहाँ तो साधर्मिको के 200-250 एकाउन्ट थे। इसलिए चार-पांच करोड़ रू. जितनी रकम भी कोई देकर जाए, तो भी उसकी व्यवस्था हो जाए। यहाँ तो देने ही थे, वापस कहाँ लेने थे?

पर ये सब जानते हुए भी भुवनभूषण म. ने मजाक में पूछा, "कितना देना

है ? पूराने नोट देने है ?''

उस बहन ने बाहर से ही नम्रतापूर्वक जवाब दिया, ''पैसे तो मात्र 2000 ही देने है, पर साहेबजी ! पूराने नोट नहीं है नये नोट ही हैं। मैं आज तीन घंटे लाईन में खड़ी थी, पूराने नोट बदलने के लिए.... वो बदलने के बाद अचानक ही मुझे विचार आया कि, ''दीक्षा खर्च में मैं छोटा सा भी लाभ लूं।'' इसलिए तुरन्त ही यहाँ आ गई, भाव गिर जाए, उससे पहले ही पुण्य का काम कर लेना अच्छा....''

भु.भू. म. को मजाक करने के लिए दु:ख हुआ और वो बहन पास की रूम में मुमुक्षु को कडक 2000 रू. की एक नोट देकर परम संतोष के साथ वहाँ से चले गये।

(कड़ी धूप में तीन घंटे तक लाईन में खड़े रहकर मिले दो नोट में से एक नोट इस तरह दे देने की भावना वाले ये नयी पीढी की 20 वर्ष की उम्र के रसना बहन क्या अनुमोदनीय नहीं हैं ?)

१०) ''साहेबजी ! मुमुक्षु को 24000 रू. दीक्षाखर्च के लिए दिये हैं।'' लगभग बारह बजे में हॉल में पच्चक्खाण पार रहा था, तब दो प्रौढ उम्र की बहनों ने पैसे देकर मुझे बात की।

''नयी नोट दी हैं ?'' मैंने गंभीरता से ही पूछा। मुझे पता था कि लोगों को तो नयी नोट की अभी बहुत जरूरत हैं। पूराने नोट यहाँ तो चले, ऐसा था। शायद देने वाले को पुरानी नोट देने में संकोच होत हो, तो मैं कह सकता हुँ कि ''आप ये चिंता मत करो। हमको जिसको देना है, उनका एकाउन्ट तो लगभग खाली ही हैं। इसलिए उनके एकाउन्ट में ढाई लाख तक भरने में कोई समस्या नहीं। आपकी पूरानी नोट का भी यहाँ तो सदुपयोग हो ही जाएगा।''

''हा जी ! नयी नोट ही दी हैं।''

''उसकी जरूरत नहीं, आप पूरानी नोट दोगे तो भी चलेगा।''

''साहेबजी ! दो-चार दिन पहले मेरे बेटे को पूरानी नोटो के साथ ही भेजा था, परन्तु यहाँ श्रावक ने मना बोला कि पूरानी नहीं चलेगी, नयी दो, इसलिए नोट बदलकर नयी दी है।''

''कौन था ये मना करने वाला ?'' मुझे थोड़ा गुस्सा आया। 'देने वाले के भाव गिर जाए ऐसा नहीं किया जाता', ये मना करने वाले को पता होना चाहिए।

''पता नहीं, पर म.सा. ! कोई बात नहीं।''

''ऐसे नहीं चलेगा, आप पूराने देकर जाना और ये लेकर जाना....''

''म.सा. ! मैं मेरे पति के पास से ये पैसे नहीं लायी। मुझे हर महिने खर्च के लिए जो रूपये मिलते हैं, उसमें से लगभग हजार रू. मैं बचा लेती थी, वो इकट्ठा किये हुए 24000 हजार रू. थे, ये मेरे ही पैसे मैंने दिये हैं। मेरे पति को तो यह बात कहनी ही नहीं हैं। अब मेरे पास तो कोई पूरानी नोट नहीं है, पूरानी नोट के लिए पति को बताना पड़ेगा।''

''इसका मतलब ये कि आपने दो वर्ष की मेहनत की कमाई एक साथ हमें दे दी,बराबर ना ?'' मैंने अहोभाव से अनुमोदना की।

''ना ! ये एक ही वर्ष की है, बीच में दिपावली वगैरह पर पीयर में से भी पैसे मिलते हैं। सब इकट्ठा करके एक वर्ष में ही 24 हजार हो गए।''

''आपका नाम लिखा देना।''

''उसकी जरूरत नहीं....''

बाद में बहुत जिद की, तब अपने लड़के का नाम लिखा कर चले गये।

(एक बात ध्यान रखना कि

*उस बहन ने कोई पैसे लिखवाए नहीं थे। उनके नाम पर 24 हजार रू. उधार खाते में नहीं लिखे हुए थे। और इसलिए ही उनको पैसे देने की कोई जवाबदारी या बोझ भी नहीं था। स्वार्थ उनको नहीं था।

*उसमें भी हर्ष से पूरानी नोट देने आये और यहाँ श्रावक ने स्पष्ट मना किया तब उल्लास टूट ही जाता हैं कि, ''जाने दो, नहीं देने'' पर ऐसा नहीं हुआ।

* उन्होंने लाइन में लड़के को खड़ा रखकर, खुद खड़े रहकर 24 हजार जितनी रकम की नई नोट लाकर दी।

एक व्यक्ति के भाव कैसे होने चाहिए ? यह पता चल रहा है ना ?)

११) ''आज नरेशभाई व्याख्यान में क्यों नहीं दिखे ?'' प्रवचन के बाद मैंने उनके परिचित एक श्रावक को पूछा। मैंने लोगों के मुँह से सुना था कि नरेशभाई वर्षो पूर्व तो पूरे नास्तिक थे और धंधा भी करोड़ों रू. का करते। परंतु पू.आ.भ. उदयप्रभसूरिजी म.सा. के संपर्क के बाद उनमें परिवर्तन आया और उस दिन से लगभग पूरा धंधा बन्द कर दिया है और पूरा दिन धर्म में दे सकते हैं।

और मैंने तो देखा भी था कि वो व्याख्यान में गैरहाजर मुश्कील से ही दिखते।

"म.सा. ! मोदी ने सबको काम पर लगा दिया हैं। आज मैंने नरेशभाई को नीचे बैंक की लाईन में खड़े देखा। अब तो बाजार में खरीदी करने को भी पैसे नहीं हैं।500-1000 की नोट नहीं चलती। 100 की नोट कम ही हैं।इसलिए सबको की खरीदी के लिए भी 2000 की नोट लेना जरूरी है, इसलिए सब काम में लग गये हैं। घर के छोटे-बड़े सब को लाईन में खड़े रख के नोट बदलते है। कितने तो दो चार बार खड़े रहकर भी नोट बदलते हैं।" उन श्रावक ने मुझे नरेशभाई के व्याख्यान में नहीं आने के कारण के साथ-साथ दूसरी सब बहुत सारी बाते कह दी।

मुझे हँसना आया, "**करोड़पतिओं की भी ये हालत! इसका नाम ही संसार असार!**"

उस रात मैंने हँसते-हँसते नरेश भाई को कह भी दिया कि, "देखा ना! नरेन्द्र भाई ने आपको भी लाईन में लगा दिया। संसार की असारता तो देखो...."

वो अंदर ही अंदर हँसते रहे।

इस बात को दस दिन हो गए।

एक दिन नरेश भाई ने मुझे कहा कि, "साहेबजी! हमारे पास दीक्षाखर्च के लिए जो फंड आया हुआ था, उसमें ज्यादातर पुरानी नोट ही थी। और जो जो दीक्षार्थी परिवार को उससे चल जाता, उन उन परिवारों को वो नोट दे दी। पर कोई कारणवश तत्काल में ही नयी नोटो की ही जरूरत हो तो अपने पास एक लाख रू. जितने नये नोट पड़े हैं। आप बताना, उसमें उपयोग हो जाएगा।"

(वो बहन 24 हजार रू. के नये नोट देकर गये, उसके पहले का नरेशभाई का ये प्रसंग हैं।)

"इतनी सारी नयी नोट कहाँ से आयी? किसने दी?"

तब वहाँ बैठे हुए दूसरे परिचित श्रावक ने, नरेशभाई कुछ बोले, उसके पहले ही उल्लास से उनका गुणानुवाद चालु किया, "म.सा. ! आपको ऐसे श्रावक जिंदगी में नहीं मिलेंगे। आपको पता है ना कि बीच में दो चार दिन ये व्याख्यान में नहीं आए थे और आपने पूछा तब किसी ने जवाब दिया था कि वो तो लाईन में खड़े है और आपने उनकी मजाक भी उड़ाई थी।

पर साहेबजी! आज आपको सच बात बताता हुँ। मैं तो उसी वक्त बताना चाहता था पर नरेश भाई ने मना किया था, पर आज मैं बता कर रहुँगा।

साहेबजी! दीक्षाखर्च के जो रूपये इकट्ठे हुए थे वो सब पूराने नोट ही थे। नरेश भाई ने विचार किया कि, ''किसी को अचानक नये नोटो की जरूरत पड़े तो उसके लिए थोड़ी तैयारी रखनी चाहिए।''

और साहेब! वो अपने लिए, परिवार के खर्च के लिए लाईन में खडें नहीं थे पर दीक्षार्थी परिवारों को सहायक बनने के लिए लाईन में खड़े थे। 1 लाख रू. में से 40 हजार जितने नोट तो उन्होंने ही बदलवा दिये। एक बार में सिर्फ चार हजार ही मिलते थे। वो भी खुद लगभग चार-पांच बार लाईन में खड़े थे और अपने पुत्र वगैरह पूरे परिवार को भी इस काम के लिए लाईन में खड़े रखा।

साहेबजी! अपने परिवार के लिए तो वो एक भी बार लाईन में खड़े नहीं रहे। तीन-चार घंटे नौ से बारह बजे के बीच में रास्ते में ऐसा करोड़पति व्यक्ति खड़ा रहे, वो दीक्षार्थी परिवार के लिए.... मुझे बताओ तो जरा, क्या ऐसे श्रावक आपको आजतक मिले हैं?''

कहते कहते वो श्रावक रोने लगे, पर मैं भी अपने आप को रोक नहीं सका। मैंने उनकी मजाक उड़ाई थी और तब भी वो मौन ही रहे थे। मैंने उनको कहा था कि, ''आपने पैसे के लिए, परिवार के लिए प्रवचन क्यों छोड़ा''.... पर मुझे आज पता चला कि, ''उन्होंने तो प्रव्रज्यार्थीओं के लिए प्रवचन छोड़ा था....''

तारीख 8 नवम्बर से 30 दिसम्बर तक के दिन ऐसे थे कि हम कोई भी श्रावक को कोई भी काम देने के पहले हजार बार सोचते।

उनकी तीव्रतम भावना थी कि, ''हम सब चातुर्मास परिवर्तन उनके यहाँ करे।'' पर मैंने उनकी ये भावना पूरी नहीं की थी। उसके बाद उन्होंने खेद भी व्यक्त किया था कि, ''म.सा.! आपका परिवर्तन हमारे यहाँ नहीं हुआ, उसका बहुत दुःख है मुझे!''

उन शब्दों में मेरे लिए कोई शिकायत नहीं थी, पर अपने दुर्भाग्य के लिए शिकायत थी।

(ये लिख रहा हुँ तब ऐसा निर्णय कर लिया है कि भारत भर की कुल बारह दीक्षाओं में 1 करोड़ के आस-पास रकम से लाभ लेने वालों की पूरी व्यवस्था पूरे

चार महिने जिन्होंने संभाली थी, ऐसे उन नरेशभाई को मुझे कुछ तो देना ही चाहिए। मैं ज्यादा तो क्या दे सकता हुँ ? पर हा ! तीन फरवरी की दीक्षा के बाद चार फरवरी को तीनों नूतनदीक्षितों के साथ हमारे आठ साधुओं के प्रथम पगलीये उनके यहाँ ही करेंगे। उनके लिए ये चातुर्मास परिवर्तन से भी ज्यादा बड़ा होगा।)

12) ''म.सा. ! आपके दिये हुए वासक्षेप का जबरदस्त प्रभाव देखने को मिला'' आहोर का एक परिवार मेरे पास आकर कह रहा था। मैंने इस बार चौमासे में एक काम किया था। जो सात बड़े पापों का आजीवन नियम ले, उनको कुल नौ आचार्य भगवंतो का सूरिमंत्र का वासक्षेप भेट स्वरूप देना।

उस वासक्षेप के लिए लगभग 1 हजार लोगों ने नियम ले लिया। उसमें शराब-जुआ-व्यभिचार-गर्भपात.... मुख्य पाप थे, उन पापों से लोगों को बचाना बहुत ही जरूरी था।

उस वासक्षेप के बारे में ही ये परिवार बात कर रहा था।

''हम दो-चार दिन बाहर गाँव गये थे। वापस आए तब पता चला कि, मेरी दुकान में से सात लाख रू. का माल चोरी हो गया है, ताले टूटे हैं। मैं चिंतित हो गया। पोलीस में शिकायत की, पर कुछ नहीं हुआ।''

सोमवार को घर से बाहर निकल रहा था, तब श्राविका ने कहा, ''एक काम करो - म.सा. ने जो नौ आचार्य भगवंतो का मिश्रित वासक्षेप दिया है, उसको सिर पर डालकर जाओ, और आप संकल्प करो कि यदि वो माल मिल जाए तो उसके रूपये धर्म कार्य में खर्च करने।''

श्राविका के कहने पर मैंने श्रद्धापूर्वक वो वासक्षेप सिर पर डाला, संकल्प किया और घर से निकला.... म.सा. ! चमत्कार हुआ ! मैं रास्ते पर से जा रहा था कि वहाँ एक गली में मेरी नजर पड़ी कि, ''एक ट्रक में माल चढा रहा था।''

मुझे लगा कि, ''ये माल तो मेरा ही हैं।''

मैंने गली के अंदर जाकर होंशियारीपूर्वक चेक कर लिया और मुझे पक्का विश्वास हो गया कि, ''माल मेरा ही हैं।''

बाद में पोलिस को बुलाकर पूरा माल छुड़ाया, लगभग पांच लाख रू. का माल वापस आया। आज पूरे परिवार के साथ आपको मिलने आए है और आप जहाँ बोलोगे वहाँ ये पांच लाख रूपये देने हैं।''

उस भाई ने अपनी बात पुरी की।

मैंने कहा कि, "दीक्षाखर्च के लिए खर्च करोगे तो सबसे अच्छा, पर एक बात.... आपने जो संकल्प किया, वो सच्ची बात! आपने मुझे देने का कह दिया यानी संकल्प तो पूरा कर दिया, पर अब मेरी बात सुनो।"

"**पहली बात**, अगर आपके घर में पैसों की जरूरत हो तो आप घर के लिए ही पैसे रख सकते हो। घर में कोई प्रसंग हो, और उसके लिए जरूरत हो तो रख सकते हो....

दूसरी बात, अगर स्वजनों में – समाज में किसी को आर्थिक सहायता की जरूरत हो तो उनको भी दे सकते हो....

तीसरी बात, इन दोनों में जरूरत ना हो, तो दीक्षाखर्च के लिए जरूरत है ही...."

"साहेबजी! हमको तो दीक्षाखर्च के लिए ही लाभ लेना है, हमको दूसरी कोई भी चिंता नही हैं।" उस भाई ने स्पष्ट शब्दों में बता दिया।

और गुजरात में एक मुमुक्षु की दीक्षा का लाभ उनको दे दिया। ये लिख रहा हुँ तब तक दीक्षा हो गई है, वो श्रावक-श्राविका दीक्षा में तीन दिन के लिए विशेषकर जाकर आए। उन्होंने उस मुमुक्षु को अपनी संतान मान लिया है, मुझे दो दिन पहले ही वो मिलकर गये। "म.सा.! दीक्षा में बहुत मजा आया। उस नूतन दीक्षित के गुरू ने तो हमको कह दिया है कि अब हर वर्ष एक बार अपने संतान के वंदन के लिए आना पड़ेगा...."

पूरी जिन्दगी तक ये श्रावक-श्राविका अनुमोदना करेंगे। अपने लाडले संतान(!)को देख-देख कर खुश होंगे। ये संतान अब जो 24 घंटे धर्माराधना करते है उसका पूरा लाभ इस परिवार को मिलेगा।

वो भाई बोलकर गए, "मेरी दुकान में चोरी हुई। वो मैं भगवान का उपकार मानता हुँ, चोरी हुई तो ही हमको इस दीक्षा का लाभ मिला।"

13) "दीक्षा खर्च के लिए 80 हजार रू. देने है" 18-20 वर्ष की उम्र की एक बहन ने बताया। मेरे लिये अब ये रोज का हो गया। रोज-रोज मिठाई खाते है तो मिठाई अच्छी लगनी बंद हो जाती है, उसी प्रकार रोज-रोज लोगों के सुकृतों को देखकर उनकी अनुमोदना का मेरा भाव कम तो नहीं हो जायेगा' ना ऐसी मुझे चिंता होने

लगी।

"पैसे किसके है ? पापा के ?"

"नहीं, मेरे हैं। मुझे मेरे पैसों से अंगुठी बनानी थी। मुझे अंगुठी का बहुत शोक हैं। पिछले पांच वर्षो से ये 80 हजार रू. इकट्ठे हुए हैं। पापा के पास तो बहुत पैसे है पर मुझे तो मेरे पैसों से लानी थी।"

"अब ?"

"अब अगुंठी नहीं, परंतु दीक्षा में ही लाभ...."

"क्युं ऐसा ?"

"प्रवचन सुनकर.... लोगो को इतनी तकलीफ है और मैं अपनी अंगुठी की चिंता करू, इसका मतलब ही क्या ?"

"पापा ने हाँ कहा ?"

"वो तो हाँ ही कहते हैं। अभी पालिताणा गये है, यहाँ ट्रस्टी हैं। वो खुद गुप्तरीति से साधर्मिको की बहुत सहायता करते हैं। जैन महासंघ में बहुत सक्रिय हैं। साधर्मिको को स्कूल की फीस, जरूरत का सामान, मेडीकल.... वगैरह बहुत काम जैन महासंघ करता है, उसमें पापा सक्रिय हैं। सुरेश भाई ओटवाला.... नाम हैं।"

अतिसुखी परिवार की लड़की में दीक्षार्थी परिवार के लिए ऐसा भक्तिभाव जगा, ये राजस्थान की खानदानी का प्रभाव!

14) पू.आ.भ. योगतिलक सूरिजी के परम भक्त चैन्नई निवासी राजेशजी चन्दन परिवार ने चैन्नई में कुल 81 दीक्षार्थीओं का वर्षीदान का वरघोड़ा निकाला था। प्लेन में लाना-ले जाना वगैरह पूरा लाभ उनका था। वो भाई खुद बहुत अच्छे आराधक!

साहुकारपेट के मार्ग पर घुमकर शोभायात्रा आराधना भवन के आंगण में पहुंची। पूरा हॉल खचाखच हो गया, बैठने की भी जगह नहीं रही। एक के बाद एक मुमुक्षु आते गये, जय-जयकार के नारे गुजंते रहे। 81 दीक्षार्थी होने से सबको आने और बैठने में आधा घंटा हो ही जाता हैं। मैं पाट पर बैठा था। संयम संबंधी गीत संगीतकार गा रहे थे, वो सुन रहा था। पर पूरी एकाग्रता नहीं थी, बीच-बीच में आँखें खोल कर सामने भी देख रहा था।

एक तरफ युवान शंख बजा रहे थे। मेरे सामने बीचों-बीच संगीतकार बैठे

थे। दायी तरफ से एक के बाद एक मुमुक्षु अंदर आ रहे थे और आगे आकर पाट के बायी तरफ बैठ रहे थे।

हितेशभाई मोता, हिमांशुभाई राजा, विनोदभाई धानेरा डायंमड वगैरह बड़े-बड़े श्रावक थे। इस कार्यक्रम के लिए विशेषकर आए थे। इसमें मेरी तो आराधना भवन के हिसाब से मात्र निश्रा ही थी, मुख्यता नहीं।

अचानक मेरी नजर मेरे सामने ही बैठे हुए एक व्यक्ति पर गई।

वो भाई

स्तब्ध होकर बैठे थे....

आँखे बां करके बैठे थे....

आजु-बाजु देखने की भी उनकी उत्कंठा नहीं थी....

फिर भी आँखों में से आंसु टपक रहे थे....

बीच में आँखें पोंछने के लिए रूमाल निकाला, आँखें पोंछी, तब तो पक्का ख्याल आ गया कि वो रो रहे है....

मेरा उनके साथ विशेष परिचय नहीं था, परंतु मैं उनकों जानता था।

वो थे पू.आ.भ. गुणरत्नसूरिजी म. के निश्रा में पालीताना में 50 से 80 करोड़ रू. के खर्च से विनीता नगरी वाला एतिहासिक चातुर्मास कराने वाले **रमेशभाई मुथा!**

वो क्यों रो रहे थे? धनवान पैसे खर्च करना जानते है, रोना नहीं जानते.... ऐसा मैं मानता था।

चारों तरफ बहुत आवाज थी इसलिए मेरी आवाज उन तक पहुँच सके वो संभव नहीं था। इसलिए पास में पड़े एक कागज पर मैंने लिखा कि, "आप क्यों रो रहे हो? उसका कारण जानना चाहता हुँ।" और आगे बैठे श्रावकों के द्वारा उन तक वो कागज पहुँचाया।

उन्होंने वो कागज लिया, पढ़ा, मेरे सामने देखा और पेन हाथ में लेकर उसी कागज पर खाली जगह में लिखा, "जैनशासन की सबसे अनमोल वस्तु प्राप्त करने ये भाग्यशाली जा रहे है उसका मन में बहुत ही आनन्द हो रहा है और ये आनन्द ही हर्ष के आंसु रूप बाहर छलक रहा हैं।" लिख कर वो कागज उन्होंने मेरे पास भेजा। सभा में बैठे व्यक्ति कुतुहल वश हमारा ये पत्र व्यवहार देख रहे थे। उनका

जवाब पढ़कर मैं अत्यंत खुश हुआ।

धनवान पैसे खर्च करना भी जानते है और दीक्षा जैसे पदार्थ की किमत को आंसुओं में बहाना भी जानते है....

ऐसा मैंने पहली बार देखा। अरबोपति रमेशभाई से मुझे ऐसी अपेक्षा तो बिल्कुल नहीं थी।

सब मुमुक्षु बैठ गये, मुझे प्रासंगिक प्रवचन देना था। पूरी सभा शांत थी।

''हम इन 81 मुमुक्षुओं का बहुमान तो करेंगे पर उससे पहले ऐसे व्यक्ति की अनुमोदना करनी है जिन्होंने इन 81 मुमुक्षुओं के लिए हर्ष के आंसु बहाकर सबसे पहले अश्रु मोती के साथ इन मुमुक्षुओं का बहुमान कर लिया हैं।''

ऐसा कहकर मैंने कागज पर लिखा मेरा प्रश्न और उसका उत्तर सभा के बीच पढ़कर सुनाया और रमेशभाई मुथा को खड़ा किया। सबने उनकी अनुमोदना की।

उसके बाद 81 मुमुक्षुओं का बहुमान किया.... उसके बाद मेरे बोलने का अवसर आया। मैंने वहाँ बैठे विनोद भाई की भी अनुमोदना की, जिन्होंने डायमंड मार्केट में जब मंदी थी तब सेंकड़ों साधर्मिको को कोई भी प्रकार के काम के बगैर अपने यहाँ नौकरी पर रख दिया और इस तरह अभी तक 12-15 करोड़ के आसपास बगैर काम कराये या अल्प काम के लिए पगार देकर साधर्मिक भक्ति की थी।

यह ऐसा दिन था कि हमारे पास दीक्षार्थी के दीक्षा के खर्च के लिए कुल 30 लाख रू. के आसपास आए थे। और हमारे पास कुल 9 दीक्षा के लिए निवेदन आया हुआ था उसमें भी तीन दीक्षाओं में 10 लाख का खर्च अनिवार्य जैसा था इसलिए बाकी की छ: दीक्षाओं के लिए तो अभी तक बाकी ही था, वैसे तो मुझे उसकी चिंता नहीं थी, क्योंकी हमने सबको कहला दिया था कि, ''हमारे पास फंड होगा तो ही हम दे सकते हैं।'' और इसलिए इन छ: दीक्षाओं के लिए मना करने की तैयारी थी।

हाँ! दु:ख इस बात का था कि, ''उनके परिवार को तकलीफ होगी।'' पर क्या करूँ? इसके लिए पैसे मांग-मांग कर मेरी साधुता को बेचने का काम, दूसरों के मन में बोधिदुर्लभता की स्थापना करने का काम मुझे नहीं करना था।

पर कुदरत ने तो जैसे सबकुछ तय करके ही रखा था।

मैंने विनोद भाई की अनुमोदना की तब उन्होंने खड़े होकर प्रासंगिक दो मिनिट का भाषण देकर कहा कि, ''साहेबजी! हमारे लायक कोई भी कामकाज हो तो बताना।''

और किसी भी प्रकार की पूर्व तैयारी के बिना अचानक मुझे सुझा मैंने उनको दीक्षार्थी के परिवारों के दीक्षाखर्च के बारे में सब कुछ वर्णन कर दिया और आज भी हमारे पास ऐसी छ: दीक्षा हमारे पास करवानी बाकी है ऐसा स्पष्ट बताया।

उस भाषा में स्नेह था, भावना थी, कुदरत का प्रेरक बल था, भवितव्यता थी, पुण्य था, या क्रमबद्ध पर्याय था.... जैसा सोचो, पर अभी तो मैं बोल ही रहा था और रमेशभाई मुथा ने वैयावच्ची सुरेशभाई गुलेच्छा को छ: अँगली ऊँची करके इशारा कर दिया और तभी ही सुरेशभाई ने खड़े होकर कहा कि, ''साहेबजी! उन तमाम दीक्षाओं का लाभ रमेशभाई मुथा को लेना हैं।'' (उन दीक्षाओं का खर्च 5-5 लाख अदांज से होने से उन्होंने 30 लाख का लाभ ले लिया।)

सभा स्तब्ध रह गई। मुझे आनंद हुआ। रमेशभाई का कोई भी बहुमानादि भी नहीं किया गया। प्रवचन बाद मुझे कह गये कि, ''मैं जल्दी से जल्दी पैसे भेज दुंगा।'' और लगभग बीस दिनों में तो उन्होंने तीस लाख रू. पहुँचा भी दिये।

उसके बाद विनोद भाई ने भी एक दीक्षा का लाभ लिया।

(इस प्रसंग के बाद दूसरे भी लगभग तीस आने से कुल 95 ऊपर हुए।)

प्रसंग होने के बाद मैं ऊपर गया। कुछ मुमुक्षु भी मुझे वंदन करने के लिए ही ऊपर आए थे। एक के बाद एक सब चले गये, पर एक मुमुक्षु बहन बैठे ही रहे। उनको खाने के लिए बुलाने भी आए तो भी वो बैठे रहे.... मुझे ख्याल आ गया कि वो कुछ बात करना चाहते हैं।

''कुछ बात करनी है बहन?''

''हा जी!''

''बोलो!''

उन्होने आजु-बाजु देखा और मौन ही रहे। कुछ लोग आ-जा कर रहे थे, मुझे ख्याल आ गया कि वो कोई गुप्त बात करना चाहते हैं।

इसलिए मैं रूम में गया, दरवाजा खुला ही रखा और दरवाजे के बीचों

बीच दांडा रख दिया। जिससे कोई भी व्यक्ति दूर से दर्शन कर सके, वंदन कर सके, पर दांडा देखकर अन्दर नहीं आ सके, कुछ सुन ना सके।

"बोलो, बहनजी! क्या बात करनी हैं ?"

विश्व में बहुत जगह पर पानी के बड़े-बड़े झरने बहते सुना हैं लोग उन झरने वगैरह को अजूबे मानते है, परंतु मुझे तो लगता है कि उत्तम आत्माओं के आँखों में से बहते स्वपश्चत्ताप के आंसु, परगुणों की अनुमोदना के आंसु, किसी के प्रति करूणा के आंसु ये महाअजूबे हैं।

ऐसे ही कोई अजूबे को (गुण को) उतारते हुए मुमुक्षु बोले, "म.सा.! आपके बारे में बहुत सुना है पर कभी आपके दर्शन नहीं हुए आज दर्शन तो हुए, पर उसके साथ ही आपके बारे में जो सुना, वो एक ही दिन में अनुभव करने को मिला।

साहेबजी! आपने दीक्षार्थी परिवार के दीक्षाखर्च की मुश्कील के लिए जो बात करी! वो 100 प्रतिशत सच्ची है, कारण कि मैंने मेरे घर में साक्षात उसका अनुभव किया हैं।

आज से दो वर्ष पहले ही मुझे तो दीक्षा लेनी थी, मैंने घर पर मम्मी-पापा, भाई-भाभी सबको ये बात की और उन सब ने बहुत खुशी से हाँ भी बोल दी पर पापा ने कहा, "बेटी! हमारे घर में तु रत्नरूप उत्पन्न हुई है, तेरी दीक्षा मुझे ठाठ-बाठ से करानी हैं। मुझे समाज से मतलब नहीं, परंतु मेरी बेटी की दीक्षा मैं मेरी आँखों से देखुँगा और वो सामान्य कक्षा की हो, ये मेरी सहनशक्ति के बाहर हैं।"

पर बेटी! ठाठ से दीक्षा दे सके उतने पैसे अभी नहीं है, उधार लुंगा तो पुरा परिवार भविष्य में परेशान होगा, इसलिए तू अभी रूक जा। एक-दो साल में पैसे इकट्ठे करके तुम्हारी दीक्षा ठाठ से करेंगे।"

मैंने पापा को बहुत समझाया कि, "मुझे दीक्षा चाहिए, ठाठ नहीं, क्युं मुझे रोककर दुःखी करते हो ?"

पापा नहीं माने, "ठाठ की जरूरत तुम्हें भले ना हो, मुझे हैं।" और पापा के सामने मेरी कुछ भी नहीं चली।

म.सा.! मेरी दीक्षा मात्र इस कारण से दो वर्ष के लिए रूक गई।

इस बार पापा ने गिरनारजी की यात्रा करके आने के बाद मुझे कहाँ, "बेटी! पैसे की व्यवस्था तो अभी तक नहीं हुई, और कब होगी ? पता नहीं !

नेमिनाथ दादा के सामने मुझे विचार आया कि क्युँ मेरी बेटी को परेशान करूँ ? वो दीक्षा लेगी, खुश होगी तो बस ! उसकी खुशी में मेरी खुशी हैं''।

''इसलिए बेटी ! तुम्हें सहमति देता हूँ ! बस, तेरी दीक्षा में मैं कुछ विशेष नहीं कर पाऊँगा। कहीं सामूहिक दीक्षा में तेरी दीक्षा हो जाएगी। घर आंगन में अलग से कुछ करने की मेरी भावना थी, वो पूरी नहीं होगी। मुझे माफ करना बेटी! तुने कोई श्रीमंत के घर जन्म लिया होता, तो अच्छा होता....''

पापा उस दिन बहुत रोए, उदास हो गये पर मुझे दीक्षा की सहमति दे दी। मैंने उनको बहुत आश्वासन दिया, पर उनके दु:ख को मैं कम नहीं कर पाई।

साहेबजी ! आप मानोगें नहीं उनकी ऐसी इच्छा थी कि 'मेरी बेटी को दीक्षा के पहले एक बार प्लेन में सफर कराऊँ....' पर पाँच-दस हजार का खर्चा करना अभी संभव नहीं होने के कारण उन्होंने मन को मार दिया।

मेरा यहाँ वर्षीदान के लिए प्लेन में आने का तय हुआ। उससे मम्मी-पापा बहुत ही खुश हुए। मैं घर से निकली, तब उनकी आँखों में हर्ष के आंसु थे।

म.सा. ! सच कहती हुँ कि मुझे प्लेन में सफर से कोई लेना देना नहीं, पर माँ-बाप का मोह कैसा हैं ? मेरे इतने से सुख में वो बहुत खुश हो गए।

मैं मुख्य बात पर आती हुँ !

आज आपका प्रवचन सुना ! उस भाग्यशाली ने छ: दीक्षाओं का लाभ लिया, ये भी मैंने देखा और मुझे विचार आया कि मेरे मम्मी-पापा की इच्छा मेरी दीक्षा ठाठ से करने की हैं। उनकी इतनी इच्छा पूरी हो तो मैं समझुँगी कि दीक्षा लेने के पहले मैंने मेरे परम उपकारी मम्मी-पापा के उपकार का बदला चुकाया।

म.सा. ! हमने ना कोई छोटा सा जिमण रखा है,ना ही कोई विदाई समारोह ! सामूहिक दीक्षा में जो होगा, उसमें ही सब आ जाएगा। पर घर आंगन में कुछ भी नहीं कर पाने के कारण मेरे पापा के अंतर की वेदना और आँखों के आंसु को मैं बराबर समझ सकती हुँ।

साहेबजी ! आप मुझे इसमें कुछ सहायता कर सकते हो ?

साहेबजी ! आपके पास छ: दीक्षा तो बाकी है ही, और इसलिए ही नया फंड तो उसमें पूरा हो जाएगा और मैं भी यहीं कहती हुँ कि उन्होंने आपको पहले कहा था तो उनका लाभ पहले लेना चाहिए।

पर ये सब करने के बाद यदि कुछ हो सकता हो, तो.... '' वो बहन आगे बोल नहीं सके, उनका गला भर गया। वैराग्य के पंथ पर जाने के लिए निकली एक उत्तम आत्मा अपने परमोपकारी के उपकार का बदला चुका पाने की अशक्ति के कारण भर-भर कर रो रहे थे।

- धिक्कार है अपनी शादीयों में करोंड़ों रूपये खर्च करने वाले **जैनो को!**

- धिक्कार है शादी आदि प्रसंगों में सिर्फ कपड़ों पर लाखों खर्च करने वाले **जैनों को!**

- धिक्कार है तपश्चर्यादि के पीछे सिर्फ समाज में अपनी श्रीमंताई का दिखावा करने के लिए , खाने-पीने के पीछे लाखों रू. का पानी करने वाले **जैनों को!**

-धिक्कार है सिर्फ होटलों में या घूमने-फिरने में हजारों लाखों रू. का, घंटों, दिनों में पानी करने वाले **जैनों को।**

ये जैन अपना कर्तव्य भूल गये।

पाप के पैसे ने इन जैनों की बुद्धि भ्रष्ट कर दी।

जैन नाम धारी इन अजैनों को सच्चा जैन बनाने के लिए तो भगवान! आपको ही वापस जन्म लेना पड़ेगा।

मुझे उन जैनों पर गुस्सा नहीं, पर उनके अज्ञान पर, विलासिता पर, निष्ठुरता पर, मानाकांक्षा पर, निर्लज्जता पर गुस्सा हैं।

मुझे पता ही है कि मेरा ये सब लिखना बहुतों को चुभेगा, बहुत सारे बोलेंगे की, ''ऐसा नहीं लिखना चाहिए, महाराज साहेब को लिखने का भान नहीं,'' पर मुझे पूरा भान हैं। बिचारे इन अज्ञानीओं को अपनी भावी दुर्गतिओं का भान नहीं हैं।

रमेशभाई मुथा की तरह श्रीमंत यदि जागेंगे, तो भविष्य में

- कोई मुमुक्षु की दीक्षा नहीं रूकेगी।

- कोई मुमुक्षु को दीक्षा के वरघोड़े के बाद रोना नहीं पड़ेगा।

- कोई मुमुक्षु को दीक्षा की जय के बाद अपने माँ-बाप की चिंता नहीं करनी पड़ेगी।

श्रीमंतो!

आप चाहो तो जैन संघ की महान सेवा कर सकते हो। भगवान ने आपको

हजार हाथों से संपत्ति दी है, तो उसका सदुपयोग करके उन्हीं भगवान के शासन को ऐसे मुमुक्षु रत्नों की भेंट दो।

आप मेरे जैन संघ के हो, इसलिए ही ऐसी भाषा लिखी है, इसमें सिर्फ कठोरता नहीं, पर आपके प्रति स्नेह भी हैं। आप शांति से विचार करोंगे, तो ये ध्यान में आएगा ही। एक रमेशभाई मुथा से शायद सब काम नहीं होंगे। इसलिए बहुत सारे श्रीमंतों का सहारा चाहिए ही।

''बहन! आप निश्चिंत होकर जाओ।'' कुछ सोचकर मैंने एकदम दृढ़ आवाज से कहाँ, ''आप आपके शहर में, घर कब पहुचोंगे....''

''यहाँ से सबको बेंगलोर जाना है, लगभग चार-पांच दिनों के बाद पहुँचुंगी।''

''रोना नहीं। दूसरी छः दीक्षा तो होगी ही, पर आपकी दीक्षा का लाभ सबसे पहले लेंगें। अब आप पधारों....''

परम संतोष के साथ उस वैरागी मुमुक्षु ने वहाँ से बिदा ली।

गोचरी वापरने के बाद तुरन्त ही उस शहर के एक गंभीर श्रावक के साथ बातचीत करा ली। ''24 घंटों में उनके घर अकेले ही जाकर होंशियारी पूर्वक काम कर देना। देखना, परिवार खानदान है मना ही करेंगे, परिवार को तो कुछ पता भी नहीं है। तुम्हारी बनियागिरी की परीक्षा हैं।''

''नरेशभाई! साहेब को कहना कि यहाँ सब काम हो गया हैं।'' दूसरे ही दिन दोपहर बारह बजे के आसपास उस श्रावक का फोन आया।

''कैसे हुआ?'' नरेशभाई ने पूरी बात जानने के लिए प्रश्न किया।

''पहली बात तो यह कि साहेब को खास कहना कि ऐसे काम के लिए मुझे ही खास याद किया, उसके लिए उनका लाख-लाख उपकार! और भविष्य में भी मुझे ही याद करना। आज का अनुभव मेरी जिदंगी में मैं कभी नहीं भूलूँगा।''

''ऐसे तो कोई अनजान के घर जाना हो तो साथ में मित्र या श्राविका को लेकर ही जाता हुँ। वहाँ अकेले बहन ही घर पर हो तो क्या पता? पर यहाँ मैं दूसरे किसी को भी पता चलने नहीं देना चाहता था। इसलिए उनके घर में पैसे लेकर अकेला ही गया।

मैं पहुँचा, तब घर के सब लोग साथ बैठकर मीटींग ही कर रहे थे। वो मुझे

नहीं पहचानते थे इसलिए मुझे बात निकालनी पड़ी कि, ''मैंने सुना है कि आपके घर में दीक्षा होने वाली हैं। हमारे एक परिचित भाई ने भूतकाल में किसी की दीक्षा में विघ्न डाला था, बाद में उनको पश्चात्ताप हुआ। साधु भगवंत ने उनको प्रायश्चित्त दिया कि उनको पांच से दस दीक्षाओं में लाभ लेना, ये ही प्रायश्चित!

उस भाई को ऐसा कोई लाभ मिलता ही नहीं। इसलिए उन्होंने मुझे कहा कि कहीं भी दीक्षा होने वाली हो तो मुझे बता देना, मुझे मेरा प्रायश्चित्त पूरा करना हैं।

ढूँढ़ते-ढूँढ़ते मुझे आपके परिवार मे दीक्षा का पता चला। मैंने उस भाई से बात की। वो भाई तो खुश हो गये। उन्होंने ही मुझे यहाँ भेजा है.... ये लो.... ऐसे कहकर मैंने पैसे उनको दे दिये।

मैंने देखा, ''वो परिवार सोच में पड़ गया.... एक तरफ तो जरूरत थी और काम हो रहा था उसका आनंद था। दूसरी तरफ खानदानी उनको ये पैसे लेने से रोक रही थी....''

''भैय्या! पापा बाहर गांव गये हुए है'' मुमुक्षु के भाई ने कहाँ, ''उनको पूछे बिना हम ये ले लेंगे, तो वो हमारी हालत बिगाड़ देंगे।''

''तो पूछ लो.....''

फोन पर बातचीत होने के बाद वो युवान बोला, ''पापा ने कहा है कि मैं आऊँ फिर बात करेंगे!''

पर फिर तो मैंने जोरदार जिद्द की, बहुत आग्रह किया और कह दिया कि, ''मैं ये रकम वापस लेकर नहीं जाऊंगा। आप मेरा फोन नंबर रखो। पापा आये और वो मना करे तो मुझे बताना।'' इस प्रकार झुठा फोन नम्बर दे दिया, जिससे वो मुझे ढूँढ ही ना सके।

बहुत बातों के बाद उनको स्पष्ट अनुभव हो गया कि मैंने उस परिवार के लिए सच्ची लगन से पैसा दिया है और उनकी इज्जत थोड़ी भी कम ना हो उसका भी पक्का ध्यान रखने वाला हुँ। उसके बाद तो उन्होंने दिल खोलकर बात की। मुझे कहाँ कि ''भाई! हम कितने दिनों से चिंता में ही थे कि दीक्षा कैसे करेंगे? मुमुक्षु को तो कुछ भी नहीं, पर हम सबका मन कैसे माने? आप जब आए, तब भी हम यहीं चर्चा कर रहे थे। हमको तो लगता है कि आपको भगवान ने ही भेजा हैं।''

"अब सुनो, आज यहाँ पर ही खाना खाकर जाना।"

मैंने बहुत मना किया, पर वो नहीं माने। आखिर उनके संतोष के लिए मैंने वहीं भोजन किया। जब उनके घर से बाहर निकला, तब आँख में आंसु के साथ, प्रभु प्रति अपार श्रद्धा के साथ, परम संतोष के साथ उन्होंने मुझे भावभरी बिदाई दी।

मेरे जीवन का ये श्रेष्ठ अनुभव साहेबजी की कृपा से प्राप्त हुआ हैं।"

और अपना ये अनुभव फोन पर नरेशभाई को कहते-कहते वो श्रावक तब भी गद्‌गद् हो गये।

उसके बाद चेन्नई के ही कैलाशभाई ने मुझे कहा कि, "म.सा.! पालिताना गया था, ऊपर दादा के दरबार में एक बहन को देखा, वस्त्रों पर से, प्रभुभक्ति से, बाहर के वर्तन से मुझे लगा कि 'ये मुमुक्षु ही होने चाहिए।' एक-दो लोंगो को पुछने के बाद मुझे लगा कि, "ये वो ही मुमुक्षु है...." क्यों की मेरी उनके साथ मोबाईल पर बात हुई थी। घर पहुँचने के बाद उन्होंने मुझे फोन किया था। फिर भी पक्का करने के लिए मैंने नजदीक जाकर पूछा, " आप..... बहन!" इतना कहकर वो और कुछ पूछे, उससे पहले ही में वहाँ से भाग गया। वो शायद मेरा परिचय चाहते थे पर मुझे मेरा परिचय देकर क्या काम?"

(15) दीक्षा खर्च का पूरा काम चुप-चाप संभालने वाले, यश मिलने से लाखों योजन दूर भागने वाले कैलाशभाई और मुख्य रूप से नरेशभाई ने कम से कम चार-पाँच बार मुझे कहा कि, "म.सा.! जिस-जिस परिवार की दीक्षा में आपने लाभ लिया है वो परिवार वाले हमको फोन करके बहुत-बहुत धन्यवाद देते है, अनुमोदना करते हैं।"

हमने उनको कहाँ कि, "हम तो सिर्फ काम संभालते है पैसे तो दुसरों के हैं।" पर वो तो सुनने को ही तैयार नहीं। बोलते है कि, "हम तो आपको जानते है, हमको दुसरे किसी का पता नहीं।"

नरेशभाई ने एक दिन मुझे बताया कि, "साहेबजी! एक भाई का सुरत से फोन आया था। मुझे लगा कि उनको दीक्षा के लिए जरूरत हैं। इसलिए मैंने पूछा कि, "आपको कितनी जरूरत हैं?.... आप निस्संकोच मुझे बताना...."

तब वो भाई हँसते-हँसते बोले, "जरूरत थी दो वर्ष पहले! तब मेरी बहन के दीक्षा के लिए तीव्रभाव थे और हमने हाँ भी कर दी थी। परंतु खर्च करने की

व्यवस्था नहीं थी, इसलिए हमने बहन को रोका। आज उस बात को दो वर्ष हो चुके हैं। अब हमारे पास पैसे हो गए है और इस वर्ष ही बहन की दीक्षा तय हो गई है, अब हमको कोई जरूरत नहीं।

फिर भी आपको इसलिए फोन किया है कि विरतिदूत में आपने जो जाहेरात दी थी (दीक्षार्थी परिवार के दीक्षा खर्च के लिए....) वो मुझे एक साध्वीजी ने पढ़ाया था। वो पढ़कर मुझे दो वर्ष पहले की हमारी परिस्थिति याद आयी।

उस वक्त किसी ने ऐसी योजना बनाई होती, तो मेरी बहन की दीक्षा हो गई होती। दो वर्षो में उन्होंने बहुत स्वाध्याय कर लिया होता, बहुत सी आराधना कर ली होती, पर सिर्फ पैसे के कारण उनका संयम, आराधना सब रूक गया।

भाई ! आपकी अनुमोदना करने के लिए ही यह फोन किया है कि आपने सच में बहुत ही अच्छा काम हाथ में लिया हैं। हो सके वहाँ तक ये काम बन्द मत करना, चालु ही रखना। जिससे मेरी बहन जैसी दुसरी कोई मुमुक्षु की जिंदगी के अमूल्य वर्ष बिगड़े नहीं।'' और रोंधी आवाज के साथ उस भाई ने फोन रख दिया।

नरेश भाई के मुख से ये घटना सुनकर मैं अवाक हो गया। खुद नरेशभाई भी गद्‌गद् हो गये थे।

वो पहले का जमाना था, जब किसी को दीक्षा लेने की इच्छा हो तो दीक्षार्थी आत्मा कोई भी प्रकार का विशेष खर्चा किए बिना सीधी-सादी दीक्षा ले लेते।

पर व्यवस्थाएँ बदल गई।

जोरदार वरघोड़ा निकालना पड़ता है....

स्वामीवात्सल्य रखना ही पड़ता है....

विदाई समारोह रखना ही पड़ता है....

संगीतकार और वक्ता बुलाने ही पड़ते है....

कुछ पूजा पढ़ानी ही पड़ती हैं।

20 प्रतिशत परिवार ये सब करते है कर सकते है, पर उनके पीछे 80 प्रतिशत परिवारों को भी करना पड़ता है.... ऐसा आजकल दिखाई दे रहा हैं।

धनवान लोग नीचे दिये इस प्रकार के विचार कर सकते है....

1. मैं हर वर्ष 5 लाख/10 लाख में एक दीक्षा का लाभ लूंगा, अथवा

2. मैं शोभायात्रा का लाभ लूंगा, अथवा
3. मैं स्वामिवात्सल्य का लाभ लूंगा, अथवा
4. मैं विदाई समारोह का लाभ लूंगा

इस तरह अगर धनवान संपूर्ण खर्चे का या आंशिक खर्चे का भी लाभ ले ले, तो बहुत सारी दीक्षाए जल्दी हो जाए और उनके परिवार को प्रसन्नता रहेगी।

या फिर एक ऐसा सक्षम मंडल तैयार हो जाय कि

- जिसमें वक्ता Top हो
- आर्टीस्ट Top हो
- संगीतकार Top हो
- किसी भी प्रकार के रूपये नहीं लेते हो
- आने-जाने का गाड़ी-भाड़ा भी नहीं लेते हो.....

दीक्षार्थी के दीक्षा की अनुमोदना के लिए कार्यक्रम करना। ये ही उनका कर्त्तव्य!

ऐसे एक के बदले पाँच मंडल तैयार हो तो तो बहुत अच्छा, जिससे एक-साथ बहुत सारी जगहों पर प्रोग्राम हो, तो वो बहुत सारी जगहों में पहुँच सके।

- शायद आर्टिस्ट पैसे लिए बिना काम करने वाले नहीं मिले, तो कोई धनवान ये लाभ ले ले कि, ''इसका खर्च मैं ही दुंगा।''

चलो, मैंने तो अपनी भावना बता दी, बाकी तो नियति में जो होगा, वो ही होगा।

16) लगभग पच्चीस वर्ष की उम्र के एक बहन आये, ''म.सा. ! मेरे पास पाँच ग्राम का सोने का सिक्का है, वो मुझे दीक्षाखर्च के लिए देना है और उसके साथ ये अंगूठी भी....'' ऐसे कहकर उन्होंने अपनी अंगुठी भी निकाल कर नरेश भाई को ये दोनों वस्तुएँ दे दी।

दुसरे दिन शाम के समय वो बहन अपने पति को साथ लेकर आए, उनका परिचय कराया।

''आपने जो कल दिया है ,वो घर में पूछ कर ही दिया है ना ?''

''हाँ जी ! मेरे सासुजी मेरे मम्मी से भी ज्यादा अच्छे है, बहुत ही अच्छी तरह रखते है, उन्होने आज्ञा दी, बाद में ही मैंने दिया हैं।''

''अच्छा, पर बहनजी ! सूर्यास्त होने वाला है, इसलिए आपको जाना

पड़ेगा'' मैंने कहाँ और मर्यादा समझ कर वो दोनों बाहर निकल गये, पर एक ही मिनिट में उनके पति वापस आए।

''क्या हुआ ? कोई काम है ?''

''हा ! साहेबजी !'' कहकर उन्होंने अपनी ऊंगली में से अंगुठी निकालकर कहा, ''ये मुझे दीक्षाखर्च के लिए देनी हैं।''

''पर आपके श्राविका तो सोने की अंगुठी देकर ही गये हैं।''

''हा ! पर मैंने कुछ नहीं दिया ना ? वो उन्होंने अपनी भावना से दिया है, मुझे तो देना बाकी ही हैं।''

''साहेबजी ! मुझे धंधे के लिए बाहरगाँव जाना पड़ता है, एक-दो बार ट्रेन में मेरे गले की चैन चोरी हो गई, तब से वैसे भी मुझे सोना पहनने का मन कम हो गया है, उसमें भी आपकी ये दीक्षाखर्च की बात सुनी, इसलिए इच्छा हो गई।''

''और म.सा. ! ये अंगुठी सगाई की है, श्राविका ने सगाई के वक्त मुझे जो पहनाई थी वो है, फिर भी अब इसका मोह नहीं रहा।'' और वह युवान चला गया।

दो-चार दिन बाद वो दोनों वापस वन्दन करने आए, तब मैंने कहा, ''बहनजी ! आपके श्रावक ने तो सगाई तोड़ दी है'' वो बहन सोच में पड़ गये, फिर मैंने बताया। ''उनकी ऊंगली देखो, आपकी पहनाई हुई अंगुठी कहाँ हैं ? वो तो उन्होंने निकाल ही दी हैं।''

अब उन बहन को ख्याल आया ''म.सा. ! शादी ही हो गई है, अब भले ही सगाई टूटे, उनको ऐसा भाव जगा, उसका मुझे आनंद हैं।''

दीक्षाखर्च के ये 16प्रसंग यहाँ बताए, हमारे छोटे-छोटे आराधक बड़ी-बड़ी भावनाओं से भरे हुए है, जिन्होंने धन की छोटी-छोटी नदी बहा दी हैं, उनकी सब की अनुमोदना करना।

दीक्षा लेने वाले खास विचारना कि, ''आपकी दीक्षा के लिए किसी ने छोटा-बड़ा भोग दिया है, उस भोग की किंमत आपको उत्कृष्ट दीक्षा पालकर चुकानी है, इसके सिवाय इन दानवीरों की आपके पास कोई भी अपेक्षा नहीं।''

अभी तो बहुत सारे प्रसंग होंगे ही, है ही.... पर मुझे याद नहीं आ रहे.... इसलिए उन दुसरे छोटे-छोटे दानवीरों को याद नहीं कर सका, उसके खेद के साथ.... मेरी स्मरण शक्ति की कमी के कारण मेरी भूल की माफी मांग कर विराम लेता हुँ।

ढेबरा वाला (पराठा वाला)

''संवत्सरी के दिन 1000 पौषध का हमने ऐलान किया है परंतु एक मुश्किल है, जो उपवास करने वाले है, उनकी चिंता नहीं, पर जो एकासना करने वाले है, उनकी चिंता हैं। पौषध में अपने घर एकासणा करने जाने में शरम भी आती है और घर दूर हो तो आने जाने में भी बहुत समय चला जाता है। उसमें भी साहुकार पेट की भीड़ तो आप जानते ही हो, उसमें से निकलना बहुत भारी काम.... संघट्टा आदि होता ही है.... और कितने ही बहने ऐसे है कि जिनको पौषध करना हो, तो भी घर पर पति-बच्चों को एकासना करवाने के कारण उनको घर पर रहना ही पड़ता हैं।''

''इन सबका उपाय एक ही है कि, ''आराधना भवन में ही सामुहिक एकासना करवाना'' परंतु ये भी योग्य नहीं। संवत्सरी के दिन संघ में रसोड़ा कराना ये योग्य नहीं, ऐसा कभी नहीं होता।''

एक चतुर श्रावक ने मुझे व्यवस्थित पूरी बात बतायी।

मैंने बीच का रास्ता सोच लिया।

दुसरे दिन जाहेरात कर दी कि, ''संवत्सरी के दिन पौषध करने वालों में से जिसको भी एकासना करना हो, उनको घर जाने की जरूरत नहीं। उनको यहाँ ही नीचे एकासना की व्यवस्था हो जाएगी।''

पर सिर्फ ढेबरा(पराठा) और चाय.... ये दो ही वस्तु!

संवत्सरी को उपवास ही करना चाहिए, पर नहीं हो सके तो सिर्फ इन दो ही वस्तु से एकासना कर लेना चाहिए।

और हा! संघ में ये दोनों वस्तुए नहीं बनेगी। ऐसे बड़े दिन में संघ में कभी भी रसोड़ा नहीं हुआ और वो चालु कराना भी नहीं।

तो जिन बहनों की भावना हो कि वो घर पर ये दो वस्तु बना कर दोपहर को यहाँ ले आये और एकासना कराये, वो हमको बताए....''

प्रवचन के बाद लगभग पच्चीस वर्ष की उम्र के एक बहन ऊपर आये, ''म.सा. ! एकासना कराने का लाभ हमको दो....''

''कितनों का कराओगे?''

''पाँच....''

"ठीक है तो एक व्यक्ति के पाँच-छः ढेबरे के हिसाब से लाने हैं।"

"साहेबजी ! रोटी-सब्जी....वगैरह ?"

"दुसरा कुछ भी नहीं, प्रवचन में स्पष्ट कह ही दिया है कि सिर्फ दो ही वस्तु...."

"तो साहेबजी ! ज्यादा एकासना का भी लाभ देना।"

"कितने ?"

"मैं मेरे सासुजी को लेकर आती हुँ।"

थोड़ी देर बाद वो सास-बहु साथ में मिलने आएँ

"म.सा. ! हम 200 ढेबरे बनाकर लाएँगे और उसके अनुसार चाय भी...."

मैं, सुनता रहा, देखता रहा।

"आपके घर पर कितनी औरते हैं ?"

"मैं मेरी लड़की और मेरी बहु.... हम तीन काम करने वाले हैं। मेरी सासुजी है पर उनकी उम्र 82 वर्ष की है, इसलिए हमको उनकी सेवा करनी होती हैं।"

"तो आप तीन जने संवत्सरी के दिन 200 ढेबरा बनाओगे ? घर पर बनाओगें ?"

"हा जी !"

"आपकी आराधना बिगड़ेगी।"

"साहेबजी ! हम तीनों की आराधना भले बिगड़े, पर उसके सामने बाकी के कितने सारे लोगो की आराधना बढ़ेगी, पौषध बढ़ेंगे, बहने भी फ्री हो जाने से पौषध कर सकेंगे, इसलिए आप हमारी चिंता मत करों।"

नक्की करके उन दोनों ने तो विदा ली।

पर संवत्सरी के दिन जो पौषध होंगे उसमें एकासने कितने होंगे ? उसका अंदाजा लगाना मुश्किल था।

60 के आसपास एकासना की गिनती करके, एक के छः-आठ ढेबरे गिने, तो भी 400 के आसपास ढेबरे चाहिए। 200 नहीं चलेंगे।

अंत में दुसरे दो परिवारों को भी 100-100 ढेबरा का लाभ दिया, जो पहले

से ही बता कर गये थे।

संवत्सरी को वो बहन अपने पति के साथ 200 ढेबरे और चाय की कोटली भरकर आ गये, बराबर बारह बजे! मेरा भी एकासना था, उन्होंने साधु भगवंत का और 80 जितने एकासना का लाभ लिया।

दुसरे दिन कैलाशभाई का समाचार आया कि, ''ना ज्यादा ना, कम (कम भी नहीं हुए ज्यादा भी नहीं!)''

80 लोंगो के बीच 400 थेपले हो गए, दसेक बचे.... एकदम अच्छी व्यवस्था हो गई।

और दो-चार दिन के बाद वो सास-बहु ने समाचार दिये कि, ''हम उस दिन जल्दी उठ गये, प्रतिक्रमण किया, मैंने बहु को कहाँ कि तू नहा कर पूजा करके आ, तब तक मैं ढेबरे का आटा गुंथ कर काम में लगती हुँ।''

''मेरी लड़की को मैंने उपरवाले बहन के घर ढेबरा बनाने के काम में लगाया। 100 ढेबरा हम बनाएंगे, 100 ढेबरा उपर बनेंगे, तो 200 होंगे, समय कम, इसलिए ये व्यवस्था की।''

''बहु पूजा करके आयी, फिर वो थेपला बनाने बैठी और मैं पूजा करने गई। 11 बजे लगभग सब तैयार हो गया।''

''बीच-बीच में मेरे सासुजी को दवा देने वगैरह का काम तो चालु ही....पर म.सा.! बहुत ही मजा आया, ऐसा लाभ जिंदगी में कभी नहीं मिला, अब तो हर वर्ष ऐसा लाभ मिले ऐसी भावना रखती हुँ।''

वो सासु बोली।

कुछ दिनों के बाद उनके घर पगले करने जाने का हुआ। बिल्ड़ीग में नीचे पार्किंग में उन्होंने प्रवचन रखा, बिल्डींग वालों को और स्वजनों को इकट्ठा किया.... रंगोली-दीपक.... उत्साह का तो कोई पार ही नहीं।

उस वक्त उनके 82 वर्ष के सासुजी भी नीचे आये, कुर्सी पर नहीं, पर नीचे जमीन पर बैठकर और 'अपने आंगण में साधु पधारे है' उसके आनंद में उन माजी ने गहुंली गाई। 92 वर्ष की उम्र में भी उनका आवाज वहाँ बैठे 150 आसपास लोगों को सुनाई दे रहा था।

उसके बाद मैंने मांगलिक प्रवचन किया, और उसके बाद दुसरी मंजिल

पर उनके घर पगले करने गया, पर मुझे ऊपर जाकर पाँचेक मिनिट राह देखनी पड़ी, क्योंकि 82 वर्ष के सासुजी लिफ्ट होने के बावजूद उस दिन दो मंजिल चढ़कर उपर आये, वहाँ मेरे सामने कुर्सी पर बैठे।

उस घर में बड़ी सास-सास-बहु तीन पीढ़ी साथ में थी।

अचानक एक बहन आगे आकर बोलने लगे.... ''म.सा.! इन माँजी को एक भी पुत्र नहीं....''

''तो फिर उनकी बहु और उनकी भी बहु.... ये तीन पीढ़ी कहाँ से आयी? पुत्र बिना पुत्रवधु थोड़ी होती हैं?'' मैं सोच ही रहा था और मेरी सोच देखकर वो बहन आगे बोलने लगे ''पुत्र नहीं होने से इन्होंने अपने देवर के पुत्र को गोद लिया है, ये आपके पास में जो भाई खड़े है, वो इन मांजी को सगी माँ के जैसे पालते हैं। वो भाई ऐसे तो इन मांजी के देवर के पुत्र थे और उनकी पत्नी यानी ये बहन!''

बीच के सासु की तरफ अंगुली करके वो बहन ने बात आगे बढ़ाई..... ''म.सा.! इस पुत्रवधु ने अपने ससुरजी की पुरे मन से सेवा की हैं। संडास-बाथरूम साफ किया हैं। ससुरजी की सेवा के लिए वर्षो तक अपने पीहर भी नहीं गई। बाहर भी कम ही जाते थे.... ज्यादा से ज्यादा एक-दो दिन के लिए जाकर घर पर आ जाते थे।

आज वो ससुरजी तो गये। अब 82 वर्ष के इन माँजी की (सासुजी की) उसी प्रकार अखंड सेवा करते हैं।''

माँजी के देवर देवलोक चले गये है, देवरानी है.... वो पीछे खड़े....''

बहन ने उन बहन के सच्ची सासुमा के दर्शन कराये।

माँजी ने कहाँ, ''म.सा.! ये लोग मुझे रात को भी दवा देते है, मुझे नहीं लेना। इतने वर्षो तक रात को नहीं खाया, अब क्युं रात को दवा लेनी?..... मैं नरक में जांऊगी.....'' 92 वर्ष के माँजी पश्चात्ताप के आंसु बहाने लगे।

''ऐसी परिस्थिति में दवा लेनी पड़े, तो अपवाद समझना। बाद में प्रायश्चित्त कर देना, पाप मिट जाएगा....चिंता नहीं करना।'' मेरी भाषा में मैंने उनको शांत किया।

''ओ देराणी! आगे आओ।'' माँजी ने 75 के आसपास की उम्र वाले देराणी को आगे बुलाया.... ''मैं अब कभी भी मर सकती हुँ। आज ये म.सा. अपने

घर पधारे है, तो उनकी साक्षी में ही तेरे पास माफी मांग लेती हुँ।" इस प्र
बोलकर दो हाथ जोड़कर मांजी ने माफी मांगी। "पुरी जिंदगी के दौरान मैंने
कोई भी दु:ख पहुँचाया हो, तो मुझे माफ करना...."

वाह रे जिनशासन! अनपढ़ दिखने वाली राजस्थानी माँजी में इतनी स
थी कि 'हर एक जीव के साथ क्षमापना करके फिर जग में से विदा लेनी।'

वहाँ खड़े सबकी आँखे भर आयी।

25 वर्ष की पुत्रवधु के सासुजी और 82 वर्ष की सासुजी की पुत्रवधु.... इस प्रकार डबल रोल में काम करने वाले वो पचास वर्ष की उम्र के बहन को मैंने कहा कि आपने सास-ससुर की इतनी अद्‌भुत सेवा की है, इसलिए ही भगवान ने आपको भी आज्ञा मानने वाली संस्कारी बहु दी हैं।"

25 वर्ष की पुत्रवधु ने कहाँ "म.सा.! सासुजी मुझे आगे से प्रवचन में भेजते है, मुझे कहते है कि, "माँजी को मैं देख लुंगी तुं प्रवचन सुनने जा, तुझे बहुत लाभ होगा।"

बोलो, साहेबजी! उन्होंने पुरी जिंदगी सेवा की है अब तो उनकी ऐसी ही इच्छा होनी चाहिए, कि "पुत्रवधु काम करे और मैं धर्मआराधना करू।" इसके बदले अभी भी वो सेवा करते हैं और मेरी आराधना की चिंता करते हैं.... इसलिए ही तो मैंने आपको कहाँ कि मेरी सासुजी मेरी माँ से भी महान हैं।"

मैं वहाँ से वापस उपाश्रय में आया, तब मुझे उस परिवार के कोई भी व्यक्ति का नाम याद नहीं था, मुझे मात्र इतना याद रहा कि, "ढेबरेवाले...."

(ये वो ही बहन है, जिन्होंने दीक्षाखर्च के लिए 5 ग्राम सोने का सिक्का दिया था।)

और आप सब पैसों को बहुत महत्त्व देते हो, तो एक बात ये भी मैं बता देता हुँ, कि "ये 200 ढेबरे बनाने वाला परिवार कोई सामान्य परिवार नहीं था, परंतु व्यवस्थित सुखी परिवार था। मेरी दृष्टि से करोड़पति तो होगा ही...."

नीतिमत्ता

ढेबरे वालों के घर से उपाश्रय जा रहा था, तब उनका लड़का मुझे छोड़ने साथ आया।

''आप क्या करते हो ?''

''फ्लेटस, होटल, वगैरह में फर्नीचर डिजाईन तैयार करके देता हुँ, कोन्ट्रेक्ट पर काम करता हुँ पर काम सरल नहीं।''

''क्युं ?''

''अभी ही एक नयी होटल का काम आया था,'' मैं देखने गया, सब तरफ नजर की, तो मुझे ख्याल आ गया कि, ''ये नोनवेज होटल बनने वाली हैं।''

''तब तो कुछ नहीं बोला पर घर आकर फोन करके कह दिया, ये काम मैं नहीं कर सकता।''

''उन्होंने मुझे बहुत आग्रह किया, पर मैंने स्पष्ट मना कर दिया, कि जहाँ मांसाहार बनने वाला हो, उस होटल का फर्नीचर मैं नहीं कर सकता।''

27 आसपास की उम्रवाले, धर्म में विशेष नहीं जुड़े हुए उस युवान की तरफ में देखता रहा।

''कितने महिने का काम था ?''

''तीन महिने का''

''मुनाफा ?''

''तीन लाख का तो पक्का....''

''छोड़ दिया ?''

''हाँ!''

''पर तुमको कहाँ मांस पकाना था या खाना था ?'' मैंने परीक्षा की।

''म.सा. ! मेरे बनाए हुए फर्नीचर में बाद में भी मांस पकाये, खिलाए, उन सबका दोष मुझे तो लगेगा ही ना ! वो रसोई मेरे कहने अनुसार बनेगी, वो सब दोष क्या छोटे हैं ?''

''शाबाश ! लाख लाख धन्यवाद है तुमको ! तीन लाख को लात मार दी आपने....''

(फाइव स्टार होटल में अपनी शादी आदि रखने वाले मूर्ख जैन धनवानों

को पता नहीं कि उन होटलों में रोज मांस पकाते है, खाते है, आपके लाखों रूपये से ये होटल वाले कमाते है और ये पैसे से धंधा बढ़ता है। पिंजरापोल में दान देने वाले, जीवदया की टीप करने वाले, कोर्ट में अहिंसा के लिए केस लड़ने वाले, पर्युषण में बड़े-बड़े भाषण देने वाले आप आपकी ये फाइव स्टार की शादी आदि प्रवृत्तिओं के द्वारा वो होटलों को बढ़ावा देकर, सेंकड़ों मुर्गो की, बकरों की, गाय-भैंस की, कत्ल में निमित्त बन रहे हो....''

उस युवान को करोड़ों नमन करने चाहिए, क्योंकि वो सुखी होते हुए भी उसका अपना धंधा इतना विकसित नहीं। वो अभी शुरूआत में हैं। पर ऐसी परिस्थिती में भी तीन लाख जितनी बड़ी रकम को भी लात मार दी हैं।

और हा! उनके मम्मी ने भी उनको ये ही हितशिक्षा दी हुई थी कि, ''बेटा! तेरा मन न माने तो काम ज्यादा मत बढ़ा! पाप के पैसे हमको नहीं चाहिए।'')

औचित्य पालक : सचिव

सामान्य ट्रस्टों में ऐसा देखने को मिलता है कि, ''अध्यक्ष यानी राष्ट्रपति! और सचिव यानि प्रधानमंत्री!''

मेरे चातुर्मास की जय बुलाने के लिए चेन्नई से जब चार श्रावक बारडोली आए, तब सबसे पहली बार मैंने सचिव (सेक्रेटरी) गौतम भाई को देखा। मैं नीचे के हॉल में बैठा था, बाकी के सब साधु ऊपर गैलेरी में बैठे थे।

मेरे साथ चर्चा करने के बाद, जय बुलाने के बाद गौतमभाई ने कहाँ, ''म.सा.! दुसरे साधु भगवंत कहाँ है? ऊपर है? मैंने हा कहाँ। तुरंत ही ऊपर जाकर सब साधु भगवंतों के पास जाकर 'मत्थएण वंदामि' कहकर विदा ली।''

''पहली बार परिचय हुआ था, इसलिए इतना विवेक रखे ये स्वभाविक हैं।'' ऐसा मैंने सोचा।

फिर विहार करते करते कर्नाटक बल्लारी पहुँचे। मद्रास से 500 के आसपास कि.मी. दुर बल्लारी में मद्रास से सामूहिक जय बुलाने के लिए लगभग 30-35 लोग आए। उसमें भी गौतम-भाई साथ में ही थे।

वहाँ भी मैं हॉल में ही था, बाकि के साधु रूम में थे, तो जय बुलाकर जाते

वक्त रूम में जाकर सब साधुओं को नमन कर कर उन्होंने विदा ली।

मैंने इस बार बराबर ध्यान रखा।

केशरवाड़ी प्रवेश किया, तब भी उन्होंने एक-एक साधु भगवंत के पास स्पेशल जाकर शाता पुछी।

उसके बाद वेपेरी में, पुरूस्वाकम में, शेषकाल में जहाँ-जहाँ वो पहुँचे, वहाँ-वहाँ वे अपना औचित्य नहीं चुके।

अभी तक मैंने उनके इस गुण को मात्र नोट किया था, जाहिर में अनुमोदना का अवसर नहीं आया था। मुझे ऐसा डर था कि, ''लोग ऐसा समझेंगे कि म.सा. इनकी चापलुसी करते है, क्योंकि वो श्रीमंत है, सत्ताधीश हैं।''

पर एक दिन चातुर्मास में कोई बात निकली थी और गौतम भाई बोले.... ''म.सा.! 25 वर्ष पहले पू.आ.भ. कलापूर्ण सूरिजी के हाथ से यहाँ नया मंदिरजी की प्रतिष्ठा हुई, तब भोजन-समारोह में हमारे जैन मंडल ही पुरस्कारी करते और अभी भी वो ही करते हैं। एक बार तो बाहर थालीओं की जरूरत थी और झुठी थाली धोने वाले कम होने से जल्दी नहीं आ रही थी, तब मैंने भी लोगों की झुठी थालीयाँ धोकर बाहर साधर्मिको को खाने के लिए दी।''

''म.सा.! हमारी ओफिस में हम पानी का गिलास भी नहीं उठाते, नौकर के पास ही पानी मांगते है, पर संघ के काम में हम नौकर बने हैं। पुरस्कारी का काम भी कर लेते हैं।''

''खाने वाले झुठा छोड़े, तो विनंति करके उनको खाने के लिए प्रेरणा करते है और फिर भी वो नहीं खाए, तो उनका झुठा उनके सामने ही हमने खाया है, जिससे खाना व्यर्थ ना हो और हमको इस तरह खाते देख, शरमा कर बहुत सारों ने झुठा छोड़ा भी नहीं।''

गौतम भाई के मुख से सहजभाव से निकली ये सब बाते सुनने के बाद मैंने जाहेर में भय निकाल कर अनुमोदना भी कर ली।

वैसे तो वो बार-बार मिलने नहीं आते, पर आते है तब औचित्य करने में कभी नहीं चुकते और छोटे से छोटा साधु बुलाए, तो भी आते हैं।

स्व नहीं, स्वजन नहीं, शासन

"दिनेश भाई ! एक बात करनी है, मात्र विनती है, कोई आग्रह नहीं.... आपको कोई भी तकलीफ ना हो तो ही हाँ करना, थोड़ी भी शरम मत रखना" त्रिस्तुतिक के एक श्रावक को स्पेशल बुलाकर मैंने मुख्य बात कहने के पहले भूमिका निभाई।

बैंगलोर में रहने वाले उनके सगे बहन मंजुला बहन की दीक्षा पू.आ.भ. जयानंदसूरिजी के पास पालिताना में नक्की हुई थी, और एक वरघोड़ा रविवार के दिन साहुकार पेट में उन्होंने रखा था। गुजराती वाडी से राजेन्द्रभवन में ये शोभायात्रा जाने वाली थी, बीच में आराधना भवन था....

इसमें मेरी निश्रा जैसा तो कुछ था ही नहीं, पर मुझे राजेन्द्रभवन में वरघोड़ा उतरे, तब वहाँ पहुँच कर मांगलिक प्रवचन देना था।

दिनेशभाई ने उसके लिए सब शर्ते मानी। जिमण में मात्र आठ ही वस्तु रखी। मुझे कहा, "मैं आपको बुला रहा हुँ, तो मुझे आपकी बात माननी ही चाहिए। हाँ करो तो ज्यादा बनाऊगा, नहीं तो आठ ही .... सगे स्वजन कुछ भी कहे...."

और इस तरह शोभा यात्रा नक्की हुई थी।

तब हमें पता चला कि, "अहमदाबाद के वीतराग सोसायटी में रहने वाली रीया दोशी नाम की मात्र नव वर्ष की लड़की की दीक्षा होने वाली है और वो उन्हीं दिनों में चैन्नई आने वाली हैं।" इतनी छोटी लड़की का यदि वर्षीदान का वरघोड़ा निकले, तो शासनप्रभावना बहुत बढ़ जाए। पर उनका स्वतंत्र वरघोड़ा निकाले, तो लाखेक रू. का खर्चा हो। यदि मंजुलाबहन की शोभायात्रा में ही बाल मुमुक्षु को भी जोड़ दे, तो काम हो जाय....."

पर मंजुला बहन 60 आसपास की उम्र वाले! उनकी अकेले की शोभायात्रा! पूरा खर्चा उनके सगे भाईओ का! इन मुमुक्षु को यदि इसमें जोड़ेगे, तो लोग तो बाल मुमुक्षु को ही महत्त्व देंगे, पुरी शोभायात्रा में 9 वर्ष की राजकुमारी जैसी बेबी ही छा जाएगी। बड़ी उम्र के मंजुला बहन का तो कोई महत्त्व ही नहीं रहेगा और ये बात दिनेशभाई या मंजुलाबहन या उनके परिवार को अच्छी नहीं ही लगेगी।

इसलिए एक बार दिनेशभाई को अलग से बुलाकर पुछने का मैंने निर्णय

किया। मैंने भूमिका बनाकर रीया दोशी की बात सामने रखी, और दिनेशभाई के मोती जैसे शब्द....

"ये तो सोने में सुगंध! और बाल मुमुक्षु को मंजुला बहन की बग्गी में नहीं बैठाकर उनके लिए अलग नयी बग्गी कर लेंगे। ऐसा लाभ मुझे कब मिलेगा?"

"पर मंजुलाबहन से ज्यादा महत्त्व उस बालिका का हो जाएगा।"

"अरे! क्या बोलते हो साहेब! शासन की महिमा बढ़ेगी ऐसे कहो ना! और ऐसा भी कर देता हु कि शोभायात्रा में उस बालिका की बग्गी ही आगे रहेगी, मुख्य रहेगी, बोलो अब क्या बाकी है?"

शासन का दिल में उतरना यानी क्या? ये मुझे दिनेशभाई में देखने को मिला।

रविवार को एक तरफ उनका वरघोड़ा....

दुसरी तरफ जीतुभाई के छ री पालित संघ की पत्रिका लिखने का कार्यक्रम आराधना भवन में था, इसके साथ ही हमारे तीन मुमुक्षुओं की पत्रिका लिखने का कार्यक्रम भी साथ में था। नक्की ऐसा किया था कि "शोभायात्रा आराधना भवन के पास से निकलेगी, तब बालिका को वहाँ ही उतार देंगे। शोभायात्रा को आगे राजेन्द्र भवन जाने देना। मंजुला बहन भी उतरेंगे, तो शोभायात्रा बिखर जाएगी इसलिए वो सीधे आगे ही जाएँगे।"

आराधना भवन का पुरा हॉल खचाखच.... पत्रिका लिखनेका कार्यक्रम चालु.... उसी वक्त बालिका ने प्रवेश किया। साथ में थे नरेशभाई और बालिका की मम्मी....

बालिका का तेज देखकर लोग स्तब्ध रह गये। दीक्षार्थी का जय-जय नाद हुआ। उनका बहुमान हुआ। प्रासंगिक प्रवचन करके वहाँ पत्रिका लिखने का कार्यक्रम छोड़कर, शीलगुण वि. को सौप कर में राजेन्द्र भवन के लिए निकला। वहाँ पाट पर बैठा! कार्यक्रम चल ही रहा था और बालमुमुक्षु वहाँ आए। मंजुला बहन उनको सामने लेने गये। एक दादीपोती का स्वागत करे, ऐसे भाव से मंजुला बहन ने रीया को बुलाया। दृश्य एकदम अद्भूत था।

खुन की सगाई के बिना ये सब तब ही शक्य बनता है जब शासन की सगाई हो....

मैं जहाँपर बैठा था, वो लकड़ी की पाट नहीं थी, पर पत्थर की टाईल्स लगाया हुआ एक बड़ा स्टेज था। मुझे लगा कि, ''बालमुमुक्षु नीचे बैठेगी तो किसी को भी नहीं दिखेगी। स्टेज पर बेठेगी तो सब उनके दर्शन कर सकेंगे।''

मेरे कहने से बाल मुमुक्षु स्टेज पर आकर बैठ गये, पर जैसे ही वो उपर आये, तुरन्त ही मंजुलाबहन ने अपने बैठने के लिए बिछाया हुआ, गलीचा जैसा मुलायम-आकर्षक आसन, स्टेज पर लगा दिया और उपर उनको बिठाकर खुद पीछे नीचे सभा के बीच में बैठ गये।

जैसे पुरा प्रोग्राम ही रीया दोशी का हो, ऐसा माहोल आगे से लाभार्थी परिवार ने तैयार कर दिया।

मंजुला बहन यानी कौन? संसारी जिम्मेदारीओं के कारण दीक्षा नहीं मिल रही थी, ले नहीं सकते थे। पिछले 19 वर्षो से जिन्होंने दीक्षा नहीं मिले तब तक

(1) चावल का, चावल से बनने वाली सब वस्तुओं का सम्पूर्ण त्याग किया था।

(2) तले हुए फरसाण का सम्पूर्ण त्याग किया था।

(3) सुखडी(मातर) वगैरह दो या तीन मिठाई सिवाय सब मिठाईओं का संपूर्ण त्याग किया था।

(4) सब फलों का संपूर्ण त्याग।

(5) प्राय: एक दिन भी छुट्टा खाना नहीं।

(6) 19 वर्षो बाद उनकी जिम्मेदारिया पूरी हुई, घर से इजाजत मिली, यानी उनको तो जैसे बड़ा साम्राज्य मिल गया हो इतना आनन्द हुआ था।

उन्होंने कहा था, ''मुझे साधुवेष मिलने वाला है, साधुता भी मिले ऐसे आशीष सब देना।''

रीया दोशी का एक भाई ने वायणा करा कर बहुमान किया 22 हजार रू. से....

लोगों के भावों तक पहुँचना....सचमुच मुश्किल हैं।

श्रीपाल भवन का स्टाफ

स्वतंत्रता दिवस को ध्यान में रखकर स्थानकवासी जैनभवन में युवक-युवतीओं के शिविर का आयोजन किया। उस दिन नयी पीढ़ी को कुछ नया संदेश पहुँचे, इसलिए हमने ऐसा निर्णय किया कि "श्रीपालभवन का 19 लोगों का जो अजैन स्टाफ है, उनका सभा में बहुमान करना।"

ट्रस्ट की निश्रा में ही चलती श्रीपाल भवन नाम की भोजनशाला में कुल 19 लोग काम करते थे और उसमें उनके मुनीमजी जैन, बाकी सब अजैन! सामान्य कक्षा के इन लोगों का बहुमान शायद ही होता होगा।

"नयी पीढ़ी को ये ख्याल आये कि हमारे नौकर चाकर को भी हमें सम्मान देना चाहिए...."

"म.सा.! हमने सुना है कि 15 अगस्त की शिविर में आप श्रीपालभवन के स्टाफ का बहुमान करने वाले हो?" तीन युवान मुझे पुछने आये!

"हा! भावना है, क्यु?"

"उसका लाभ हमें दे सकते हैं?"

"आप किस चीज से उनका बहुमान करोगे?"

"सबको चांदी की चैन देगे। लगभग 1100 रू. की एक चैन होती है, हम चार लोग लाभ लेंगे। बड़ी रकम नहीं, इसलिए हमको मुश्किल नहीं आएगी।"

"पर आप सब तो अभी नयी-नयी कमाई करते होगे?"

"इसमें क्या हुआ? साहेब! 15-20 हजार की कोई किमत नहीं।"

और मैंने वो लाभ उनको दे दिया।

उन्होंने अपना नाम बोलने को भी मना किया, बहुमान भी दुसरों के हाथ से कराया। और जिस वक्त 1500 युवान-युवतीओं के बीच उन 19 नौकरों का चांदी की चैन देकर मुमुक्षु समता बहन द्वारा बहुमान करने में आया, उस वक्त वो 19 नौकरों को जैनों के लिए, साधु के लिए कोई नये ही प्रकार का सद्भाव पैदा हुआ।

साधुओं ने मुझे कहा था कि, "ये बहुमान हुआ, उसके पहले भी जब भी हम श्रीपालभवन में गोचरी लेने जाते, तब बहुत सारे नौकर गोचरी वहोराने के लिए दौड़ कर आते। तब दुसरे कोई श्रावक वहोराने आये तो विनती करते कि, "सेठ जी! आपको तो बहुत बार आपके घर पर ये लाभ मिलता ही होगा, हमको ये लाभ

लेने दो ना।'' और बहुत ही भाव के साथ गोचरी वहोराते।''

एक दिन वो सब इकट्ठे होकर मुझे मिलने आये।

''म.सा.! कितने ही दिनों से विचार कर रहे थे कि एक बार बड़े म.सा. को वंदन करके आना, आज मौका मिला।''

बातचीत करते-करते पता चला कि

एक भी व्यक्ति शराब-मांस वाला नहीं, बीड़ी-सिगरेट वाला भी नहीं, मात्र छोगाराम नाम का मुख्य व्यक्ति पेट की तकलीफ के कारण तंबाकु लेता था।

एक दिन उन सब ने मुझे श्रीपालभवन में पगलिए करने आने की विनंति की और एक रविवार के दिन दोपहर शिविर के बाद पगलिये करने गया। राजस्थान में अपने परिवार को छोड़कर मात्र पैसे कमाने के लिए यहाँ आये हुए। वो पुरा दिन श्रीपालभवन में ही रहते थे। उनके लिए तो वो ही उनका घर था।

मैंने पगलिए किये, साथ में पचासेक श्रावक-श्राविका भी थे। मांगलिक प्रवचन दिया। वो बहुत ही खुश हुए।

उसके बाद तो हर पन्द्रह दिन में एक-दो बार तो छोगारामजी वगैरह मिलने आ जाते, पैर दबाते, थोड़ी देर बैठते और चले जाते।

पुरे वर्ष में मुश्किल से दो-तीन बार अपने गाँव जा सकते थे, परिवार को मिल सकते थे.... बाकी पुरी जिंदगी इसी तरह बीत रही थी। धर्म पुरूषार्थ तो नहीं, पर अर्थ और काम पुरूषार्थ भी उनके भाग्य में नहीं था।

फिर भी साधु के प्रति एक सद्‌भाव लेकर जीते है.... ये उनके लिए संसार-नाश का एकमात्र उपाय था।

पहली कमाई

''म.सा.! 22000 रू. मुझे दीक्षा खर्च में देने हैं।'' बीस-बाईस वर्ष का एक नव-युवान मुझे कह रहा था।

''नौकरी चालु की है, इच्छा थी कि पहली कमाई अच्छे कार्यो में खर्च करनी। आपकी बात पता चली इसलिए पहली कमाई आपके कार्य में देने आया हुँ।'' ऐसे कहकर, पैसे देकर वो युवान चला गया।

थोड़े दिनों बाद एक बहन के घर पर मुझे पगलिया करने जाने का हुआ। उस बिल्डींग में अपूर्वकोटी का उल्लास! नीचे से लेकर तीसरी मंजिल तक

दीपक, गंहुली वगैरह व बाकी भी बहुत सारा!

मैंने उस घर में प्रवेश किया। घर छोटा था। अंधेरे वाला था। एक रूम+एक रसोईघर, बाहर एक छोटा सा हॉल...."मध्यम परिवार की सुचना दे" ऐसे उस घर में कुर्सी पर बैठा। चालीस-पच्चास लोग रूम में हॉल में ठुंस-ठुंस कर बैठे थे। कितनों को जगह नहीं मिलने के कारण खड़े रहे।

बराबर मेरे सामने ही एक युवान खड़ा था। 22000 रू. की प्रथम कमाई का दाता वो युवान इसी परिवार का था, ऐसा मुझे ख्याल आ गया था।

"भाई! आपके घर पर दो रत्न पैदा हुए हैं।" मांगलिक प्रवचन बाद मैंने उस घर के मालिक को कहाँ, "एक तो आपकी पुत्री, जिनको हमने झांसी की रानी लक्ष्मीबाई नाम दिया हैं।"

"दुसरा रत्न है आपका ये पुत्र" ऐसे कहकर उस युवान की तरफ ऊंगली की, अचानक उसकी बात आने से वो चौंका। सबकी नजर उसके उपर पड़ी।

आपको पता है या नहीं, ये मुझे नहीं पता, पर मैं आपको कह देता हूँ कि इसने अपनी जिदंगी की पहली कमाई 22000 रू. दीक्षाखर्च के लिए दे दिये हैं।

इस उम्र में तो इतनी रकम हाथ में आये, तो वो घुमने जाए, जलसा करे, कपड़े लाए, पार्टी दे, कम से कम अपने पास इकट्ठा करे.... नया मोबाईल लाए.... पर एक भी रूपया रखे बिना इसने पुरा ही दे दिया।"

"म.सा.! मुझे ये पक्का पता नहीं था, थोड़ा अंदाज आया था पर आज ये पता चल गया तो मुझे बहुत आनन्द हुआ कि मेरे पुत्र को ये भावना जगी। ये हमारे परिवार का भी प्रचंड पुण्य ही कहलाएगा।"

उस युवान के पापा+काका दोनों गद्‌गद्‌ हो गये।

"क्या बोलु? कैसे बोलु?" ये समज में नहीं आने के कारण युवान तो चुपचाप खड़ा रहा।

(नयी पीढ़ी में अज्ञान भले हो, पर उसके साथ-साथ पात्रता भी भरपूर हैं। उनको किसी के मार्गदर्शन की जरूरत है....)

चातुर्मास परिवर्तन के लिए 63 विनंति

"हम राम है या नहीं ये तो पता नहीं, परंतु आप सब शबरी तो बन सकते हो। आप सबको खास प्रेरणा है कि हम तुम्हारे खट्टे बोर-झुठे बोर खाने को तैयार हैं। आप हमको खुशी से चातुर्मास परिवर्तन की विनंती करो।" व्याख्यान में मैंने जाहेरात की।

"म.सा. ! ये चातुर्मास परिवर्तन यानी क्या ?" कितने ही अज्ञानीओं ने मुझे अलग से प्रश्न भी पुछा, उन बिचारों को इतना भी पता नहीं था। इसलिए मैंने व्याख्यान में ही जवाब दे दिया कि, "कार्तिक सुद पुनम के दिन ही हमको विहार कर देना होता है, परंतु हम उस दिन कोई एक श्रावक के वहाँ जाएँगे, 2-3 घंटे रूकेंगें.... फिर वापस उपाश्रय में आ जाएँगें.... ये हमारा चातुर्मास परिवर्तन! ये लाभ लेने के लिए श्रावक हमको विनती करे, उसमें से जो हमको उचित लगेगा, उनके घर हम परिवर्तन करेंगे।"

"पर इसमें ये राम ओर शबरी की क्या बात हैं ?"

"सामान्य से अभी ऐसा हो गया है कि जिसके यहाँ परिवर्तन हो, वो उस दिन बेंड बुलाते है, अपने यहाँ प्रवचन आदि के लिए मंडप बंधाते है, नवकारसी रखते है, इस सब में 20-50 हजार या लाख तक का खर्चा तो आसानी से हो जाता हैं। और साधुओं को अपने घर ही रखना पड़ता है, यानी सीधी बात है कि उसके लिए जगह तो चाहिए ही, इसलिए छोटे घरवाले तो ये विनती का विचार भी नहीं कर सकते। इसी कारण से दुसरे सभी धर्मो की तरह इस धर्म का लाभ भी धनवानों के हाथ में ही चला गया हैं।

पर हम चाहते है कि सामान्य श्रावक भी विनंती करे और उनको भी लाभ मिले। कम से कम वो भावना तो भा सकते है ना ? इसलिए हम हर एक जगह पर जाहेरात करते है, यहाँ भी कर रहा हुँ कि :-

(1) आपको सुबह नवकारसी तो छोड़ो, परंतु 1 रू. की प्रभावना करने की भी जरूरत नहीं।

(2) आपको बेंड नहीं बुलाना, थाली बजाओंगे तो चलेगा।

(3) आपके घर में हम पांच साधु भगवंत, बैठ सके इतनी एकदम छोटी रूम होगी अरे पैसेज भी होगा, तो भी चलेगा, हमको तो आपके भाव चाहिए, छोटी जगह

चलेगी, पर छोटे भाव नहीं चलेंगे। आप यदि तीन घंटे के लिए आपके घर में मात्र पांच साधु बैठ सके, इतनी जगह भी दे सकते हो.... तो, हमको चातुर्मास परिवर्तन के लिए विनंती करो।

आपकी ये सादगी ही खट्टे(!) झुठे(!) बोर.....

आप बनोंगे शबरी.....

मैं बनूगा राम......

1रू. के भी खर्च के बिना चातुर्मास परिवर्तन का लाभ ले सकते हो।

हा! जो गहुंली करोंगे, उसमें चावल श्रीफल का खर्च होगा।

शायद प्रभावना करोगे, तो 5 रू. से ज्यादा तो नहीं ही.... उसकी भी आवश्यकता तो नहीं है।"

हमारी ये बात सुनकर एक के बाद एक विनंती आने लगी। और अभी तक के चातुर्मास में सबसे ज्यादा विनंती इस बार आयी।" 63"

(A) एक परिवार ने मुझे उनका घर बताया। बाहर छोटा हॉल, रसोई, छोटी रूम....ये उनका घर था, "म.सा.! आपको चलेगा? हम पूरी रूम खाली कर देंगे। जरूरत होगी तो उस दिन हम पुरा घर ही खाली कर देंगे। पर साहेबजी! आपको चलेगा क्या? रूम छोटी है....पर म.सा.! हमारे घर ही पधारना।"

वो तो विनंती करते करते ही रोने लगे, मुझे उनको कहना पड़ा कि, "आपका घर तो बड़ा है, हम 10 साधु हो तो भी यहाँ रह सकते हैं। आप उसकी चिंता छोड़ दो, मैं कहाँ करूँगा? वो तो मुझे भी नहीं पता, परंतु ऐसे छोटे से कारण से मैं आपके यहाँ नहीं आऊ ऐसा तो नहीं ही होगा।"

(B) "म.सा.! मेरे पति को सिर्फ नवकार आता था, उनकी उपधान करने की भावना हुई, वो आपके आशिष लेने आए थे। उनको डर ये था कि, "मुझे तो कुछ भी नहीं आता....पर आपने आर्शिवाद दिया, उत्साह बढ़ गया,आपने पालिताना में साधु भ. को चिट्ठी लिखी और वो वहाँ गये। उपधान भी बहुत अच्छा हुआ। थोड़े दिनों में ही वो वापस आएगे। म.सा.! मैं उनके उपधान निमित्त कुछ भेंट मांगती हुँ।"

उनको मैं और तो क्या दे सकती हुँ? बस आप हमारे यहाँ चातुर्मास परिवर्तन करो, बस इतना ही मांगती हुँ। ये ही मेरी तरफ से उनको गिफ्ट होगा।"

पति के उपधान के आनंद का उजमणा वो मेरे चातुर्मास परिवर्तन द्वारा करवाना चाहते थे। और उनके लिए वो हर्षाश्रुओं का दान भी कर रहे थे।

उ "म.सा.! मैंने, मेरी मम्मी और मेरी श्राविका ने तो साहेब को(मुझे) विनंती तो की ही हैं।" कौशिकभाई नाम के छोटी उम्र के सी.ए. न्याय म. को गद्‌गद् होकर कह रहे थे। "पर आप उनको कहना कि हमने मात्र कहने के लिए विनंती नहीं की, हम ये लाभ लेने के लिए एकदम उत्कंठित हैं।" और वो तीनों जने मेरे पास रोने जैसे होकर गये।

(D)दीपक भाई पारसमलजी की मम्मी भी घुटनों में सख्त दर्द होते हुए भी विनंती करने आये, मैं तब हाजिर नहीं था तो भूवनभूषण म. के पास आंसु छलका कर गये।

(E)ढाई कि.मी. दूर रहने वाले रोज वहाँ से 10.30 से 11.30 वाचना में आने वाले छोटी उम्र के रितिका बहन भी बार बार विनंती करते ही रहे। दिवाली के बाद के दिनों में उनको पालिताना जाना था, तो वहाँ जाकर भी चार पांच लोगो द्वारा कहलवाते ही रहे कि, "मैं वहाँ नहीं, पर दुसरों को लाभ मत देना। का. सु. 7 को तो आ जाऊंगी। आप पांचम के दिन नाम बताने वाले हो, पर ये नाम मेरा ही होना चाहिए...."

(6)नये ट्रस्टी बबलुभाई बालक के जैसे स्वभाव से जिद्द पकड़कर बैठे।

मुझे सब तो याद नहीं आ रहे, पर मैं कह सकता हुँ कि 63 परिवारों ने इतने दिनों दरम्यान जीरण शेठ के जैसी भावना भायी होगी।

हमने परिवर्तन किया दीपकभाई के यहाँ तीन घंटे और वहा से 1.30 से 2.00 बजे तक कौशिकभाई सी.ए. के यहाँ तीन-चार घंटे।

सुबह तो लोग इकट्ठे हो, उसमें आश्चर्य नहीं था, पर जब हम 10 बजे कौशिक भाई के बिल्ड़ींग तक पहुँचे, तब तो मुझे कल्पना नहीं थी इतने लोग इकट्ठे हुए। छुट्टी का दिन नहीं था, भोजन नहीं था मात्र पांच रू. की प्रभावना थी, दस तो कब के बज गये थे.... और उसके बाद एक घंटे तक प्रवचन में लोग एकदम शांति से बैठे।

संख्या कम से कम तीन सौ....

बाकी के विनंती करने वालो के यहाँ अलग-अलग दिनों में पगले कर के आया। हर वर्ष इसी प्रकार चातुर्मास परिवर्तन करने का सोचा हैं।

सी.ए.

''न्याय म.सा. ! मैंने एक गंभीर भूल कर दी हैं।'' कौशिकभाई सी.ए. बोल रहे थे। उनकी उम्र प्राय: 27 के आसपास होगी।

''मैं बहुत समय से एक बड़ी दुकान में हिसाब करता हुँ। (ओडिटिंग) मुझे पहले थोड़ी शंका थी कि, ''उस दुकान में मांस से बनी हुई वस्तुए भी बेची जाती होगी,'' पर इसका निर्णय नहीं हुआ था। इस बार मैं कुछ काम से उनकी दुकान पर गया। मैं Auditor होने से मुझे तो सब दिखाते थे और वो क्या-क्या चीजे बेचते हैं' उसका लिस्ट मैंने देखी.... और मेरी शंका सही निकली।

मुझे चिंता हुई। मांस की चीजें बेचने वाले के हिसाब का काम करके उनके ऐसे महापाप के पैसे मुझे मेरे घर में नहीं चाहिए।

मैंने पापा से बात की, उन्होंने कहा कि,''इस बार काम ले लिया है, तो बीच में नहीं छोड़ सकते, अब से ये उनका काम मत लेना।''

''म.सा. ! भले इस बार काम तो कर लूंगा, पर इस में मिलने वाला पैसा तो मैं नहीं ही लूंगा। उस व्यापारी को मना कर दुंगा....''

''ऐसा नहीं किया जाता, तुम ये नहीं लोगे तो, वो व्यापारी तो उस पैसे को पाप मार्ग में ही खर्च करेगा। तुम इस बार ले लो, पर साधर्मिक वगैरह को दे दो....'' न्याय म.सा. ने सलाह दी।

''भले, साहेबजी ! पर मेरे घर में तो एक रूपया भी नहीं आने दुंगा और साधर्मिक के घर भी ऐसा रूपया देना अच्छा नहीं हैं। इसलिए साधर्मिको के घर के खर्च के लिए भी नहीं देना, परंतु बाहर खर्च के लिए ये रूपये दे दुंगा।''

ऐसे कहकर वो कौशिकभाई मेरे पास आए, ''म.सा. ! ये मेरे पाप के रूपये हैं। मेरी विनती है कि साधर्मिकों के भी घर में ना दे, दुसरे ही किसी खर्च में दे दे तो अच्छा। फिर भी आपको जो उचित लगे, वैसा करना।''

''दीक्षाखर्च में ये पैसे वापरेंगे तो चलेगा ?''

''आपको जो उचित लगे वो....''

और 50 हजार बगैर नाम लिखाए, गुप्त रूप से देकर वो चले गये।

इस चौमासे में उन्होंने संस्कृत की पहली बुक पुरी की, 87 मार्कस से पास हुए और अब सुलभ चरित्राणि संस्कृत कथाएँ सबके साथ पढ़ते हैं।

ये कोई फ्री बैठे हुए सी.ए. नहीं हैं, ओर करोंड़ों की कमाई कर चुका बड़ा सी.ए. भी नहीं। पर संतोष-शांति-धर्मरूचि वो इन भाई की करोड़ों रू. की पुंजी हैं।

''मेरी श्राविका के कारण गत वर्ष से पू. यशोजित म. आदि के संपर्क से मैंने धर्म पाया हैं।'' ये उनके शब्द थे।

''मेरे कारण भले जुड़े, पर मुझसे भी बहुत आगे निकल गये।'' ये उनकी श्राविका के शब्द हैं! हा! उनकी श्राविका ने भी अपने खुद के 50,000 रू. दीक्षा खर्च में दिये। (अभी के जमाने में पति-पत्नी के, संतानों के.... सबके पैसे अलग-अलग होते हैं। सबकी सत्ता अलग-अलग होती है.... हँसना मत.... सब जगह ऐसा हैं।)

('अनीति का-अतिहिंसा का पैसा घर पर भी नहीं चाहिए' ऐसा मानने वाले और पालने वाले अभी इस लोकोत्तर शासन में कितने? भोगबाद ने सबकी बुद्धि भ्रष्ट कर दी हैं।)

हमारी छाप लोगों के मन में क्या?

''म.सा.! मेरे 500 आयम्बिल पूरे होने आए है, इस दिन पारना आ रहा है तो पारने के दिन हमारे घर पगलिये करोगे?'' 50 से ज्यादा उम्र वाले एक बहन ने मुझे चातुर्मास में आराधना भवन में विनंती की।

''आपका घर कहाँ हैं?''

''यहाँ से लगभग 1 कि.मी. दुर हैं....''

''एक काम करना। अभी तो बहुत दिन बाकी हैं। आप पारने के दो-तीन दिन पहले ही मुझे वापस मिलना। उस दिन मैं नक्की कर दुंगा।'' इस प्रकार जवाब देकर मैंने उन बहन को विदा किया।

मैंने नियम बनाया था कि हो सके तब तक बहुत दिनों बाद के प्रोग्राम में पहले से हाँ नहीं करना। क्योंकि इस कारण से बंध जाते हैं और बाद में अचानक कोई काम आ जाए तो भी वो काम नहीं ले सकते।

ऊपर से मेरा स्वभाव भूलक्कड़! किसी को हाँ करके फिर भूल जाऊ और उस वक्त दुसरे कोई प्रोग्राम की हाँ कर दूँ.... फिर होगी खेंचाखेंची। मन दुःखी! मेरे पास कोई सेक्रेटरी तो है नहीं।

उसके बाद वापस एकबार वो विनंती करने आए, पर मैंने तभी भी नक्की नहीं किया। अंत में चातुर्मास के बाद जिस दिन सुबह कुरूक्कपेट जाने का था, उसी दिन उनका पारना था और उसके पहले दिन वो वापस विनंती करने आये।

तीनों बार अकेले ही आये और उनको लगा कि म.सा. को जल्दी हाँ करने का मन नहीं हैं।' भले, मेरे मन में, उपयोग में ये हकीकत स्पष्ट नहीं थी परंतु मैं खुद को ये लिखते वक्त पुछता हुँ, तो जवाब मिला कि,

- यदि बहुत सारे लोग विनंती करने आए तो हम जल्दी हा कर देते है, या जवाब में सॉफ्टनेस होती हैं।

- यदि बड़े लोग विनंती करने आए, तो भी....

यानी मन पूर्ण रूप से तटस्थ नहीं था, मध्यस्थ नहीं था....

उन्होंने मुझे तीसरीबार विनंती की, पर इसका जवाब दुँ उससे पहले ही दुसरे के साथ जरूरी बातचीत शुरू हो गई, इसलिए उनकी तरफ से मेरा ध्यान हट गया। (शायद वो कोई बड़े व्यक्ति होते, तो इस तरह उनकी तरफ से मेरा ध्यान नहीं हटता.... ये ही मेरी छद्मस्थता!)

''साहेबजी!'' नरेशभाई ने मुझे कहा, ''वो 500 आयंबिल वाले बहन मुझे अभी पुछ रहे थे कि म.सा. मेरे घर पगलिए करेंगे तो उसमें कितना खर्च करना पड़ेगा?''

मैं चौका, सावधान हो गया, गलतफहमी रोकना मेरा फर्ज बन गया।

क्या वो ऐसा मान रहे थे कि, ''वो इतना खर्च करे तो ही म.सा. आऐंगे।''

क्या वो ऐसा मान रहे थे कि, ''म.सा. आए, तब इतना इतना तो करना ही पड़ेगा।''

क्या वो ऐसा मान रहे थे कि, ''म.सा. को घर बुलाना हो तो कुछ लिखाना पड़ेगा।''

मैं सब काम छोड़कर सीधा नरेशभाई को साथ लेकर उन बहन को रूम में ले गया। ''बहन! कल आपके घर मेरे पगलिए पक्के! मैं कैसे भी करके आऊंगा। मुझे कुरूक्कपेट जाना है, आपके घर पगलिए करके आगे जाऊंगा, और ये विचार तो मन में से निकाल देना कि यहा रूपये का बोलबाला हैं।''

वो बहन खुश हो गये ''म.सा.! एक दिन ऐसा था कि हमारे पास करोड़ो रू. थे। पर पति की मृत्यु हुई। आपत्तिओं के बादल जीवन में घिर आये। उसमें भी

मुझे केन्सर हो गया। उसमें भी आराधना चालु ही रखी हैं। मौत आज नहीं तो कल आने ही वाली हैं। मुझे मेरी चिंता नहीं, पर..." उन बहन के स्वर में दर्द था।

"पर...." शब्द बोलकर अपूर्ण रखा वाक्य हजारों वाक्यों का बोध करा रहा था। उसके बाद उनके द्वारा वर्णित मुश्किले सुनकर ऐसा लगा कि, "यदि ये दुख भगवान देते होते, तो मैं भगवान को परमाधामी ही मानता" पर कर्मो का सिद्धान्त जानने के कारण इसमें भगवान को गलत कहने का मन नहीं हुआ।

ऐसी परिस्थिति में भी (वो मुश्किले यहाँ नहीं लिख रहा) उन्होंने 500 आयंबिल की आराधना पूरी की।

दुसरे दिन उनके घर पर पगलिए किये। उपस्थित 25-30 लोंगो के सामने उनकी भरपूर अनुमोदना की, सबको प्रेरणा दी कि, "सब तपस्वी के चरण को स्पर्श कर के आशीष लेना, उनको अंतर से शाता पुछना....और बराबर पारना करवाना...."

वो बहन बोले, "दो-तीन दिन बाद वापस आयंबिल ही चालु करना हैं।" अफसोस करना नहीं चाहिए, पर हो गया कि, "वो बहन 500 आयंबिल के पारने पर 25-30 लोंगो को 5 रू. की प्रभावना के सिवाय कुछ भी नहीं कर सके।"

हमको तो सकारात्मक चिंतन ही करना कि, "भगवान ने उनको संपत्ति की अनुकुलता नहीं की, ये अच्छा ही हुआ वो दिखावा-भपका करने से अटके"

बराबर ना ?

तपस्वा अमर रहा (1)

''म.सा. ! इन भाई को आशीर्वाद दो, इनको आज 22 वां उपवास हैं, खास आपके दर्शन के लिए लुंबिनी से आए हैं।'' सुशीला बहन ने मुझे बताया।

''शाता बराबर रहती हैं ?'' मैंने उन भाई को पूछा।

''अरे, म.सा. ! शाता की तो बात मत पूछो....'' भाई के बोलने से पहले ही सुशीला बहन ही बोले कि ''म.सा. ! ये उनका 22 वां मासक्षमण हैं।''

''22 वां.... ?'' मेरे शब्द अटक गये।

''हा ! और उसमें भी पहले छ: मासक्षमण उन्होंने दो-तीन वर्षो में किये, पर पिछले 16 मासक्षमण तो उन्होंने 32 महीनों में ही किये हैं। 1 महिना पारणा और 1 महिना उपवास.... इस तरह करते हैं।''

''कितने करने हैं ?''

''जितने हो उतने....''

संवत्सरी के दिन भी एकासना करने वाले मेरे लिए तो ये तपश्चर्या चमत्कार ही थी।

तपस्वी अमर रहो (2)

''म.सा. ! आज आपका चातुर्मास प्रवेश हैं, आज से ही मासक्षमण की भावना हैं। मंगल के रूप में आज जाहिर में अट्ठम का पच्चक्खाण लूंगा, परंतु आपको उनकी जाहेरात नहीं करनी, तप हो जाए, फिर करना।'' पच्चास वर्ष की उम्र के भाई ने मुझे विनंती की और मैंने स्वीकार की।

रोज प्रवचन के समय सामायिक के कपड़ों में दो मंजिल चढ़कर उपर आते, आसन आदि लेकर जाते.... ऐसा 30 वें उपवास तक चला।

मैंने उनको पहले ही मना किया था कि, ''आपको बड़ा तप चल रहा हैं और आसन लेने आनेवाले श्रावक तो बहुत है....'' पर वो नहीं माने।

जब 30 वे उपवास में भी दो मंजिल चढ़कर उपर आसन लेने आए, तब मैं गद्गद् हो गया। साथ में खड़े श्रावकों को कहा कि, ''पता है ? कि उन भाई का मासक्षमण हैं। आज 30 वां उपवास हैं।''

मैं उन श्रावकों को आश्चर्य चकित करना चाहता था, परंतु उन्होंने तो मुझे ही अंचभीत करदे, वैसी बात की.... ''म.सा. ! इनके तो 27 मांसभक्षण हो गए है, ये

28मां है, इनके लिए तो ये नवकारसी जैसा ही हैं।''

मुझे बोलने जैसा कुछ नहीं रहा।

दिपावली के बाद पता चला कि उन भाई ने पर्युषण के बाद पालिताना में उपधान किया, और उसमें भी एक मासक्षमण कर लिया।

भगवान किस-किस को कैसी कैसी शक्ति देते हैं?

A Fat Boy

पांच दिन मुझे मलेरिया बुखार आया, तब रोज पन्द्रह वर्ष का एक भीम जैसा मोटा लड़का पैर दबाने, शाता पूछने रात को आता, 'वो कब से आना शुरू हुआ और मेरा उससे परिचय कैसे हुआ?' ये मुझे अभी भी याद नहीं, परंतु मैंने इतना देखा कि वो हंसमुख स्वभाव का था, कोई भी बात शब्द छुपाए बिना स्पष्ट बोल देता था। डर शायद उससे डरता था।

मैं ठीक हो गया, फिर मुझे नये वर्ष के दिन मांगलिक के बाद बहुत सारे घरों में पगलिए करने जाना था। जो संस्कृत पढ़े थे, मुख्यत: उनके घर में पगलिए थे।

''म.सा.! मेरा घर यही ही है....मेरे घर चलो।'' लगभग दुसरे ही घर पगलिए के समय उस फैंट बॉय ने मुझे विनंती की।

''नहीं! आज दुसरे बहुत सारे घरों में जाना है, नक्की हो गया है, इसलिए अब तेरे घर नहीं। दुसरे सब अपने अपने घर पर राह देख रहे होंगे, उनको देर हो जाएगी।''

वो कुछ भी नहीं बोला, वह मेरा आसन लेकर तीसरे घर मेरे साथ पगलिए के लिए चला। वहाँ जाकर मेरा आसन बिछाता, फिर वापस नये घर जाने का होता, तब मेरा आसन लेकर मेरे पीछे-पीछे चलता।

''देख! तुं चाहे कितना भी मेरे साथ चल, तो भी तेरे घर नहीं आऊंगा।'' मुझे लगा कि वो मुझे खुश करने के लिए मेरे पीछे-पीछे घुम रहा है, मेरी सेवा कर रहा हैं। इसलिए मैंने उसको स्पष्ट शब्दों में मना कर दिया।

पर उसके मुह की रेखा भी नहीं बदली और मेरे साथ घुमता ही रहा, दुसरे श्रावक साथ थे, फिर भी उसने मेरा पीछा नहीं छोड़ा। अंतिम घर से जब हम उपाश्रय

तरफ वापस जा रहे थे, तब भी वो मेरे साथ ही था, पर उसने मुझे कहा ही नहीं कि, "मेरे घर आओ...." क्योंकि वैसे भी उसका घर तो बहुत दूर रह गया था।

"तेरे घर बाद में कभी आएँगे, चलेगा ना?" उस बालक की निर्दोषता देखकर मैंने मीठी भाषा में बात शुरू की।

"ठीक है साहेब!"

"तु अब घर जा, उपाश्रय तक आने की जरूरत नहीं।"

"नहीं, मैं साथ ही आऊगा।"

"अरे हा! तुमने नाश्ता किया?" मैंने अचानक ही प्रश्न किया, क्योंकी मुझे याद आया कि वो लगभग साड़े सात बजे से मेरे साथ था और अभी दोपहर के 11.00 बजे थे।

"नहीं! नहीं किया...."

"दुध-चाय भी नहीं?" मैंने चिंता से पुछा।

"पानी भी बाकी हैं।" उसने नम्रभाव के साथ स्पष्ट उत्तर दिया।

"अरे बापरे! तो तो तु जल्दी घर जा...."

"ना! उपाश्रय आने के बाद ही जाऊंगा।" उसने जिद्द पकड़ी और उपाश्रय तक आया। तीसरी मंजिल तक साथ में चढ़ा, मैं रूम में बैठा, तब वो भी शांति से मेरे सामने बैठ गया। जैसे कि कोई भी प्रकार की जल्दबाजी ही ना हो....

"दिपावली के पटाखे फोड़े कि नहीं?" कुछ बात शुरू करने के लिए मैंने प्रश्न पुछा।

"ना, पटाखे फोड़ने से तो बड़ा पाप लगता हैं।"

"किस तरह?" मैं जानता था कि वो क्या जवाब देगा? पशु-पक्षीओं को पीड़ा होती है, ज्ञान की विराधना होती है, पैसे की बरबादी.... ये सब उत्तर स्वभाविक थे।

"पटाखे की आवाज के कारण बहुत सारे कुत्ते रात को डर डर कर मर जाते है, पक्षी भी मर जाते है...." इतना जवाब तो मेरी कल्पना अनुसार ही था, पर उसके बाद का जवाब मेरी कल्पना के बाहर था। "सबसे बड़ा पाप तो यह है कि पटाखे फोड़ने से मनुष्यों की हत्या होती है, अपने सैनिकों की हत्या होती है, राष्ट्र द्रोह का पाप लगता हैं।"

''वो किस तरह ?'' अब मैंने जिज्ञासा से पुछा।

''म.सा. ! ज्यादातर पटाखे चीन से आते हैं। हम पटाखे खरीदते है वो चीन से आते हैं। हम पटाखे खरीदते है तो चीन को पैसे मिलते है। चीन वो पैसे से पाकिस्तान को सहारा देता है और पाकिस्तान आतंकवादिओं के द्वारा निर्दोषो को मारता है, हमारे सैनिक भी मरते है, इसलिए पटाखे फोड़ना वो तो राष्ट्रद्रोह हैं।''

खुमारी से भरे हुए 15 वर्ष की उम्र के बालक के शब्द सुनकर मैं तो खुश-खुश हो गया। इतना दूर तक का वो सोच सकता हैं ?

''मत्थएण वंदामि'' कहकर एक भाई ने रूम में प्रवेश किया और वो उस बालक से थोड़े दूर बैठे, एक दो मिनिट मैंने उन भाई के साथ बात की, भाई संघ में आगेवान थे।

''अंकल ! आप आपकी उम्र कम कर रहे हो ?'' अणुबोम्ब फूटे, उस तरह अचानक ही वो बालक स्पष्ट भाषा में उस बड़े व्यक्ति को बोला। उसकी भाषा में आवेश नहीं था, पर गंभीरता थी। मेरे जैसे भी ऐसा करने की हिम्मत ना करे....

''क्युं ऐसा बोलते हो ?''

''आप समझ गये होंगे, मुझे कारण कहने की जरूरत नहीं।''

और वो भाई और मैं उस बालक के शब्दों के पीछे का रहस्य समझ गये।

बात यह थी कि....

वो भाई आए, उसके बाद तंबाकु की गंध आने लगी थी....

वो भाई के दांत तंबाकु का सूचन कर रहे थे....

इन दो वस्तु को ध्यान में लेकर उस बालक ने तीर छोड़ा।

मुझे पता था कि वो भाई गुस्सा हो जाएँगे, परंतु उन्होंने गुस्सा नहीं किया। हा ! उनको शर्म जरूर आयी।

''बेटा ! मैं म.सा. के परिचय में अभी ही आया हुँ, धीरे-धीरे मैं सब छोड़ दुंगा, फिर तुं ही मुझे कहेगा कि अंकल ! आप आपकी उम्र बढ़ा रहे हो।''

''ठीक है, मैं राह देखुंगा।'' बालक के शब्दों में ऐसा लग रहा था कि वो अभी भी मान रहा था कि वो अंकल भले बोले, पर वो छोड़े ये बात शक्य नहीं लग रही थी। उनकी अपनी तीव्र भावना नहीं लग रही थी।

''तुं मंदिर जाता है ?'' मैंने बात बदली।

''हा ! जाता हुँ। कल तो बहुत मजा आया, मंदिर में से बाहर निकला, तब वहा भूखे कुत्ते देखे। मैंने पापा से पैसे मांगे। पापा ने मुझे डेढ सो रूपये दिये। मैंने 5-5रू. के 30 पैकेट पारले-जी बिस्कीट के खरीद लिये। और आठ-दस कुत्तों को खिलाया, बहुत ही मजा आया।''

''म.सा. ! मुझे पापा ने दिपावली पर 10 हजार रू. दिये थे, वो भी मैंने कहीं खर्च नहीं किये, कोई अच्छे काम में ही खर्च करूंगा।''

''अच्छा ? तो मुझे दे दो ? हमे दीक्षाखर्च में काम आएंगे।'' पैसे नहीं मांगने का नियम होने पर भी मैंने उसको मजाक में कहाँ।

''दे दुंगा। पर अभी ये तो ले लो....'' ऐसे कहकर उसने अपने दोनो जेब में से 100-100 की दो नोट, 5-5 के सिक्के.... ये सब मेरे सामने ढेर कर दिया।

''दिपावली में घर-दुकान में साफ सफाई करने वालों को पापा ने 100-100 रू. दिये थे, मैंने भी उसमें सहायता की थी, इसलिए मैंने पापा के पास पैसे मांगे ''मुझे भी दो'' पापा ने मुझे कल ही 200 रू. दिये हैं। ये सब पैसे ले लो। 10,000 मैं कल लेकर आऊंगा।''

(हमने वो रूपये नहीं लिये।)

''दीक्षा लेनी है ?'' उसकी उत्तमता देखकर मैंने प्रश्न पुछ लिया।

''भावना तो है ही, मम्मी पापा हाँ कहे, तो दीक्षा ही लेनी हैं।''

लगभग 11.30 बजे के बाद उसने वहाँ से विदा ली, बाद में समाचार मिले कि वो तंबाकुवाले भाई उस बालक को अपनी दुकान पर ले गये और काजु बादाम विगैरह ड्राय फ्रूट्स खिलाकर घर पर भेजा।

(एक गुप्त बात.... वो लड़का स्थानकवासी हैं।)

साधुता का राग : नयी पीढ़ी में भी

''म.सा. ! आज एक बहुत अच्छा अनुभव हुआ। आपको अच्छा लगेगा, ऐसा सोचकर आपको कहने आयी हुँ।'' नीलम बहन नाम के मुमुक्षु ने मुझे बात की।

''मैं मेरी एक फ्रेंड के साथ घर के नीचे खड़ी थी। हम बात कर रहे थे और एक युवान लड़की काईनेटिक पर वहाँ आयी। उसने हमारे पास आकर बाईक रोकी। वो मेरी फ्रेंड की फ्रेंड थी, पर मैं उसको नहीं जानती थी। मैंने तो उस बीस वर्ष

की लड़की को पहली ही बार देखा था पर वस्त्रों से लग रहा था कि वो नये जमाने के रंग में रंगी हुई थी।''

''वो दोनों बात कर रहे थे, मैं शांति से खड़ी थी, थोड़ी देर बाद मेरी फ्रेंड ने मेरी पहचान कराई, ''ये नीलम है, मेरी फ्रेंड....''

मुझे देखकर वो लड़की बोली, ''वैरागण हो ?'' वो लड़की स्थानकवासी थी और स्थानकवासीओं में मुमुक्षु के लिए वैरागण शब्द बोलते हैं।

''आपको कैसे पता चला ? मेरी भावना तो है ही।'' मैंने कहा।

''आपको देखकर ही अंदाज आ गया।'' ऐसे कहकर वो काईनेटिक वहा ही खड़ा करके नीचे उतर कर सीधे मेरे पैरो में पड़े, मुझे शरम आयी, भर बाजार में वो मेरे पैर छु रहे थे। पर वो बोले, ''आप साध्वीजी होने वाले हो, आप मेरे लिए वंदनीय हो।'' और फिर बाईक लेकर वहा से चले गये। (भोगी भी त्यागीओं को तो नमस्कार करते हैं।)

साधर्मिक भक्ति

संयमीओं को अनुभव होगा ही कि 'बाहर गाँव से मेहमान वंदनादि के लिए आए, तो उनको किसी के घर भोजन कराना यह आज की तारीख में बहुत ही मुश्किल हो गया है।' इसलिए ही लगभग हरेक संघों में चौमासा में मेहमानों के लिए मीठे रसोडे की व्यवस्था करने में आती हैं। धनवान लोग इसका लाभ लेते है, रसोइये और नौकर सब काम कर लेते है, मेहमानों को भी किसी के घर जाने मे शरम आने से ऐसे रसोडे में खाना ठीक लगता हैं। सुरत-मुंबई-अहमदाबाद जैसे मुख्य शहरों के संघों में लगभग यही परिस्थिति देखने को मिलती है और वर्तमान परिस्थिति के हिसाब से इस तरह का निर्णय ले तो उसमें भी ऐसे देखा जाएँ तो विरोध करना भी उचित नहीं।

मेहमान साधर्मिकों को घर लेकर जाकर खाना खिलाने के लिए बहनों को कितना बड़ा भोग देना पड़ता है यह बहने ही समझ सकती हैं।

पर ऐसे रसोडें में नुकसान क्या? यह देख लेते हैं।

1. जयणा का पालन होने की संभावना कम होती है ,क्योंकि काम करने वाले तो पगार लेने वाले लोग है और ऐसे रसोड़े गन्दे भी रहते हैं। उनमें घर के रसोड़े जैसी साफ-सफाई भी कम देखने को मिलती है और चींटी वगैरह सूक्ष्म जीवों की हिंसा भी ज्यादा होती हैं।

2.नौकर परोसे, उसमें साधर्मिक भक्ति का क्या भाव? यह तो लॉज, भोजनशाला, होटल जैसा ही होता हैं। ''मेहमानों का पेट भर जाए इसलिए साधर्मिक भक्ति'' ऐसी व्याख्या बहुत ही अधुरी है, उनकी आवश्यकता पुरी कर देने मात्र से भक्ति हो गई ऐसा मान लेना उचित नहीं।

3. जैन परिवारों में साधर्मिक भक्ति के संस्कार घटते जाते हैं।

4. श्री संघ के उपर साधारण का खर्च बढ़ता ही है, संघ बडा हो तो चार महिने का खर्च(मात्र मेहमानों का) दस लाख रूपये तक हो जाये, तो भी आश्चर्य नहीं।

5. रसोइये-परोसनेवाले(वेटर) आदि को लगभग वहाँ ही चार महिने के लिए रखना पड़ता है और वे बीड़ी सिगरेट वगैरह व्यसनों का सेवन करते है, पवित्र वातावरण में ऐसी अपवित्रता आती है, यह उचित तो नहीं है ना?

यह सब सोचकर अंत में हमनें निर्णय किया कि ''यदि श्री संघ तैयार हो, तो हमको कुछ परिवर्तन लाना है'' और उसका प्रयत्न चालु किया।

ट्रस्टीगण ने कहा कि ''साहेब जी ! लाभ लेने के लिए यदि श्री संघ के लोग तैयार हो जाय, तो तो अच्छा ही है, परंतु इसके लिए आप ही कहो, तो शायद हो पाएगा।''

गुजराती वाड़ी में व्याख्यान के समय चौमासा के पहेले ही हमने श्री संघ के आगे यह बात रखी और भक्तिमंत श्रावकों ने दिन लिखवाना शुरू किया, वहाँ से राजेन्द्र भवन और उसके बाद जुना मंदिर में रूके, उसके बाद हम आराधनाभवन में चातुर्मास प्रवेश करने वाले थे। इन सब संघों में भी श्रावकों ने फटाफट नाम लिखाए।

हमारी योजना इस प्रकार थी :-

1. जिसकी जितनी इच्छा हो, उसको उतने दिन लिखवाना....

2. एक दिन यानी सुबह-दोपहर और शाम तीनों टाईम उनके यहाँ साधर्मिकों की भक्ति।

3. एक घर में एक साथ ज्यादा से ज्यादा पाँच ही मेहमान। यदि ज्यादा मेहमान आएँ , तो दूसरे घरों में भेजना।

4. चौमासा के कुल 120 दिन के नाम चाहिए, पर मेहमान ज्यादा आएँ तो पाँच-पाँच के हिसाब से गिनती करने के कारण ज्यादा दिनों के नाम चाहिए।

5. एक गृहस्थ 1-5-10 दिन भी लिखा सकता हैं।

6. जब मेहमान आएँगे, तब लाभ लेने वालों को फोन के द्वारा बताया जायेगा, अगर उस दिन बिमारी, अंतराय, बहारगाँव-गमन आदि कोई भी कारण से उनको उस दिन नहीं जमे, तो वो उस दिन खुशी से कह सकते है, उस दिन का लाभ दुसरों को दे देंगे। भविष्य

में उनको वापस लाभ मिलेगा।

यह थी हमारी योजना....

हमारे लिए तो आश्चर्यजनक घटना यह हुई की कितने ही परिवारने 15-15 दिन लिखाए, कितनों ने पाँच और कितनों ने तीन....

लगभग 250 जितने परिवारों ने लिखाए दिनों का हिसाब हुआ 800 दिन। यानि कि छः चौमासे तक यह दिन चल सके।

हा! ऐसा होता है कि शुरूआत में तो उत्साह में आकर सब लिखा देते है, पर बाद में जरूरत पड़े तब सब भाग जाएं। पर इसमें ऐसा नहीं हुआ। मैं लिख रहा हुँ तब तो चातुर्मास पुरा हो चुका है और मैंने पुरे चौमासे के दरम्यान विनंती करने वाले गृहस्थों के शब्द सुने है कि "म.सा.! हमारा नंबर कब आएँगा? अभी तो कम दिन ही बाकी है....।"

अरे, विकासभाई, राहुलभाई और कैलाशभाई.... इन तीन युवाओं ने यह पुरा काम संभाला, इन पर गुस्सा होकर आरोप लगाते लोगों को मैंने नजरों नजर देखा है कि "आप पक्षपात करते हो? अभी तक हमें लाभ क्यों नहीं मिला? आप आपके परिचितो को ही पूरा लाभ देते होंगे!" और तब ये युवान मीठी भाषा में समझा के ठंडा करते।

विकास भाई ने मुझे कहा कि "म.सा.! मैं मेरे घर भी मेहमानों को नहीं ले जा सकता, यदि लेकर जाऊँ तो ऐसे आरोप मुझ पर आएंगे कि विकासभाई पक्षपात करते है, हमें लाभ नहीं देते।"

पुरे चातुर्मास दरम्यान जो जो विशिष्ट प्रसंग साधर्मिक भक्ति के संबंध में बने, वे सब तो पीछे बताऊँगा.... पर इससे मेरा उल्लास और विश्वास बढ़ने के कारण मैंने नक्की किया कि "आने वाले चातुर्मास में भी ऐसा ही करने का प्रयत्न करना।"

हमारी इच्छा कुरूक्कुपेट चातुर्मास करने की थी। आराधना भवन से ढ़ाई-तीन कि.मी. दुर ओसवाल गार्डन नाम की एक पुरी सोसायटी। चार-चार माले के कुल से लेकर्रं तक कि बिल्डींग! 800 फ्लेट् का प्रोजेक्ट! लगभग 600 जैनों की शक्यता! अभी तक 200 तो रहने आ गये, वो जगह देखने के लिए हम तीन साधु एक दिन के लिए गये, सुबह प्रवचन कर के, दोपहर बहनों के लिए एक मीटींग रखीं।

70-80 बहेने आई थी, मैंने उनको आराधना भवन की सफलता बताई, और उस के साथ 'यहाँ भी क्या ऐसा हो सकता हैं?' ऐसी प्रेरणा की। कहाँ कि हमको यह क्षेत्र तो अच्छा लगा, पर यहाँ रसोड़ा तो चालु करने की भावना नहीं है, यदि आप सब की

सहायता मिले तो !

ये काम भाईओं का नहीं था, बहनों का था, इसलिए ही उनको प्रेरणा की।

और दिन लिखवाने शुरू हुए।

मैंने मात्र पाँच मिनिट का समय दिया और उसमें एक बहेन ने बीच में खडें होकर कहाँ कि ''म.सा. ! 120 दिन का लाभ मुझे ही दो....''

''बहेन ! जमेगा? हर रोज तीन समय का है, घर पर खाना खिलाना है?''

''म.सा. ! सब सोचकर ही बोल रही हूँ।''

''पर साहेब जी ! ऐसा नहीं चलेगा, हम सबको भी लाभ लेना है, एक को ही मत दे देना....'' दुसरी बहने भड़क उठी।

''देखो, सब लोग खुद की इच्छानुसार लिखा दो, एक बात पक्की है कि एक को लाभ मिलने के बाद जब तक बाकी सबको एक एक बार लाभ नहीं मिलेंगा, तब तक किसी को भी दुसरी बार लाभ नहीं मिलेगा।

और हा ! एक बात खास ध्यान में रखना। कितने ही बहनों को बिमारी के कारण, परिवार वालों का सपोर्ट नहीं होनें के कारण या ऐसे कोई भी कारण से एक दिन का भी लाभ लेना शक्य न भी हो, तो भी उसमें संकोच मत करना, उनको भाव से लाभ मिल ही जाएगा।''

उसके बाद नाम लिखाने शुरू हुए, लगभग पचास बहनों ने पाँच-पाँच दिवस लिखाए, कितनो ने दस दिन भी लिखाए। मैंने सीधा गणित दिया कि, ''एक महिने में मात्र एक दिन भी आपको जमे, तो चार महिने के चार दिन ही होते है....''

इस गणित के हिसाब से मात्र पाँच मिनिट में ही छोटी सी मीटींग में बहनों ने 387 दिन लिखा दिए(उसमें पहले के 120 दिन भी आ गये)

अभी आश्चर्य देखो....

शाम को दुसरे एक भाई आए ''म.सा. ! मेरी श्राविका ने मुझे पुछने के लिए बाकी रखा.... हमारे 120 दिन भी लिख लो.... ऐसा लाभ कब मिलेगा?''

दो दिन बाद तीसरे भाई आए ''म.सा. ! मैं बहार गाँव गया था, मुझे तो यह संपूर्ण लाभ लेना है.... 120 दिन मुझे ही दो !''

कुल 636 दिन के नाम आ गए।

जहाँ हम मात्र एक ही दिन रहे, जहाँ के बहनों से हमारा ऐसा कोई भी परिचय नहीं, वहाँ चौमासा के 120 दिन की जगह पर 636 दिन के नाम आ गए, यह एक

इतिहास ही कहलायेगा ! कम से कम यह एक छोटे से संघ के लिए तो बहुत ही बड़ा इतिहास ही बन रहा है ना !

हम वापस आराधना भवन की चातुर्मास की साधर्मिक भक्ति के विषय में विचार करेंगे। हम पाँच साधु.... क्रिया भवन-चंदनवाला भवन.... इन दो उपाश्रय में कुल 12 साध्वीजी.... जूना मंदिर में 6साध्वीजी।

सा. विश्वपूर्णाश्री जी तो बहुत अच्छे शासन प्रभाविका ! बड़ी उमर के होने से पहले वर्षो में उनके परिचित भी बहुत ! दुसरी ओर हमारे साथ मुमुक्षु भी थे। मेरे संसारी माताजी और न्याय म.सा. के संसारी माता-पिता.... वे भी पचास दिनों तक यहाँ ही रूकने वाले थे, और जुनामंदिर में भी रूपल बहन नाम के मुमुक्षु ! इस प्रकार 8-10 लोगों का तो रोज का था ही, बहार गाँव से मेहमान आए, वो सब अलग !

इन सबकी व्यवस्था तीन युवानों ने अद्भुत कोटि की की।

साध्वीजीओं के उपाश्रय में रोज एक-दो बार जाकर पुछ ही लेना, इसके उपरांत नंबर भी देकर रखें, क्योंकि कभी भी अचानक ही मेहमान आ जाए, तो वहाँ के चौकिदार तुरंत ही बता सके।

साहुकारपेट में किसी का घर ढुंढना,लगभग असंभव जैसा ! इसलिए मेहमान खुद तो ढुँढकर नहीं जा सकते थे। उन सब मेहमानों को रोज अलग अलग घरों में पहुँचाने की जवाबदारी भी इन तीन युवाओं ने ले ली थी। पर उनको ऐसा करने की जरूरत ही नहीं पड़ी, क्योंकि जिनके घर साधर्मिक भक्ति होती वो ही तीनों टाईम सबको लेने आ जाते और वापस छोड़ भी जाते।

यह है चैन्नई की साधर्मिक भक्ति का संक्षिप्त इतिहास !

इसमें जो जो विशेष बातें हुई, वो अब बताता हूँ।

1) मुमुक्षु भव्य और कलश की दीक्षा की जय बुलाने के लिए सुरत-मुंबई से लगभग 70 के आसपास मेहमान आने वाले थे। उन सब को कोई एक ही घर में भेजना शक्य नहीं था और पाँच-पाँच अलग-अगल घर पर भेजे, 12 घरों में व्यवस्था करें तो उसमें मेहमानो का भी बहुत समय जाता। ''जय'' बुलवाने के दिन समय की कटोकटि होती ही हैं।

एक बार तो विचार आया कि ''श्रीपाल भवन में(स्थानिक संघ की भोजनशाला में) ही सबका खाने का रख दे'' पर इस तरह करना उचित नहीं लगा।

और देखो ! व्याख्यान में जाहिरात हुई और एक जबरदस्त काम हो गया। मुकेश

भाई नाहर और उनके मम्मी सरोज बहेन नाहर ने एक बात जाहिर की ''म.सा.! ये 70 मेहमान जय बोलाने के पहले दिन शाम को आ जाएँगे, शाम को बराबर चार बजे के आसपास पहुँचेंगे। उस वक्त उन सबको शाम का भोजन तो कराना ही है ना? वो पुरा लाभ हमें दे दो।''

''70 लोंगो का भोजन? आप अकेले के यहाँ? घर पर एक बहु ही तो है, पुरा कौन संभालेगा?''

''म.सा.! काम काज के लिए लोगों को बुला देंगे, बाकी हम पुरी जयणा पालेंगे और बिल्कुल कमी नहीं रहने देंगे।''

और शाम के समय उन्होंने अपने घर के नीचे बड़ी जगह में सबको भोजन कराया, भोजन के बाद मिलने आएँ मेहमानों को मैंने पुछा तो उन्होंने कहाँ, ''म.सा.! आश्चर्य की बात हैं। हम गुजराती है और हमारे घरों में ऐसी साधर्मिक भक्ति का विचार भी नहीं कर सकते, शाम के समय दो-दो मिठाई, दो फरसाणे.... और भी बहुत कुछ!'' और परोसने के लिए भी घर के सभी सदस्य वहाँ हाजिर थे।

दुसरे दिन के तीनों टाइम का संपुर्ण लाभ पू.पं. भद्रंकर विजयजी म.सा. के परम भक्त सुश्रावक शांतिलालजी ने लिया परंतु उनका घर पाँच कि.मी. दुर होने के कारण सुबह के समय सबको लेकर जाना और समयसर वापस ''जय'' के समय पहुँचाना यह बहुत मुश्किल काम था, इसलिए सुबह की नवकारशी उनके घर पर नहीं रखीं और उन्होंने भी विवेक संपन्न होने के कारण तुरंत ही इस बात का स्वीकार कर लिया।

'साहेब जी! नवकारशी का लाभ हमारे परिवार को दो' साध्वीजी हितेषपूर्णाश्रीजी के सांसारिक भाई विपिनभाई ने नवकारशी का लाभ मांग लिया, 'हमारा घर नजदीक ही हैं, नाश्ता करके तुरन्त ही मुमुक्षुओं को बाजते गाजते उपाश्रय में लेकर आएँगे।'

और 70 लोगों की नवकारशी का लाभ उस परिवार ने लिया।

दोपहर को शांतिलालजी ने सभी मेहमानों को अपने घर ले जाने के लिए स्पेशल वेन वगैरह की व्यवस्था की। दोपहर को खाना खिला कर सबको केशरवाड़ी तीर्थ लेकर गए। वहाँ से वापस सबको अपने घर शाम को खाने के लिए लेकर आएँ।

मेहमानों ने कहाँ, ''म.सा.! राजमहल जैसा घर! घर की पुत्रवधुए, लड़के वगैरह सबने हमारे चरण स्पर्श किये, हम सब को बैठाकर बाजोट पर खाना खिलाया, परोसने वाले सब घर के ही सदस्य। शांतिभाई खुद इतने बड़े होकर परोस रहे थे और

आग्रह-मनवार तो बाप रे बाप। अंत में सबको तिलक करके 100 रू. के कवर से बहुमान। हमको इतनी शरम आ रही थी कि इन सब बहुमान के लिए हम लायक ही नहीं। उस परिवार की अनुमोदना के लिए हमारे पास शब्द नहीं, हाँ! सिर्फ आँख के आँसु है....'' ओर सच में गद्गद् हुए कितने ही मेहमानों ने हर्षाश्रु बहाए। (शांतिभाई का परिवार काफी बड़ा.... इसलिए 70 लोगों को परोसने के लिए बहार से किसी को भी बुलाने की जरूरत ही नहीं पड़ी। और उनका मेनु यदि यहाँ लिखु तो अच्छा नहीं लगेगा, बाकी वह जानकर तो पढ़ने वालों को पक्का आश्चर्य होगा ही।)

इन 70 मेहमानों को रास्ते में ट्रेन में नवकारसी, भोजन पहुँचाने का काम विजयवाड़ा जैन संघ ने किया। नवकारसी में ही इतना आ गया कि मेहमान खाते-खाते थक गए।

2) संघ के ट्रस्टी चंदनमलजी ने जिद करके एक साथ मेहमानों की पाँच दिनों तक तीनों टाईम की पुरी भक्ति अपने घर पर रखी। उनकी श्राविका और पुत्रवधुओं ने सब संभाला और खुद चंदनमलजी भी तीनों टाईम हाजिर थे, एक बार भी श्राविका या पुत्रवधुओं के भरोसे नहीं छोड़ा। दुकान गये थे, परंतु समय पर घर आ ही जाते। इस निमित्त ही एक दिन सब ट्रस्टीओं को भी घर पर खाने के लिए आमंत्रण दिया।

3) यहाँ ''मनोरीबाई कंवरलाल वैद'' परिवार अत्यन्त सुखी होने के साथ साथ अत्यन्त धार्मिक परिवार हैं। तीन भाई, उनके पुत्र, पुत्रवधु, पौत्र.... तीन घर अलग-अलग, पर पास-पास में ही।

उनकी श्राविकाएँ कहती है, ''म.सा.! मेहरबानी करके पाँच-पाँच साधर्मिक आये, तब हमारे यहाँ मत भेजना, 25-30-50 आये, तब ही हमको लाभ देना। हमारे तीनों परिवारों के बीच अच्छा स्नेह हैं। पुत्र वधुएँ और हम सब मिलकर सब बराबर कर लेंगे।''

अरबों रूपये की सम्पत्ति के मालिक इस परिवार की उदारवृत्ति देखकर, साधर्मिक की भक्ति करने का उल्लास देखकर आँखों में आंसु आए बिना कैसे रहे?

और सचमुच ऐसे बड़े बड़े लाभ ही इस परिवार ने लिये।

एक बार तो उनके घर बीस लोगों की नवकारसी और दोपहर का भोजन था, अचानक दोपहर को साध्वीजी के दुसरे दस मेहमान आ गये, विकास भाई ने फोन करके पुछा, ''आपके यहाँ बीस मेहमान तो खाने के लिए आ गये है, आपके यहाँ ही है, दुसरे दस मेहमान अभी आए है, तो आपके यहाँ भेजु? या फिर दुसरे....''

'शरम नहीं आती आपको ऐसे पुछते?' जवाब मिला ''तुरंत भेज दो। जितने आए, उन सबको भेजो। हमारा लाभ किसी और को नहीं देना।''

हमनें पाँच की संख्या का नियम किया था, पर एक भी परिवार ने यह नियम पालने नहीं दिया। सबको लेकर जाते, जिद करके भी लेकर जाते।

4) अहमदाबाद से तीन मुमुक्षु बहनें व्याख्यान सुनने आदि के लिए 15 दिन रूके थे, उसमें से स्वीटी बहेन ने साधर्मिक भक्ति का अपना अनुभव मुझे लिखकर भेजा था, उसको सामान्य बदलाव के साथ अक्षरक्षः यहाँ छापा जायेगा।

5) नेल्लूर से जुना मंदिर के साध्वीजीओं को वंदन करने के लिए बहने आयी थी। वे तो राजस्थानी ही थे, दक्षिण भारत की ही थे, चैन्नई से 200 कि.मी. ही दुर रहते थे, पर वे भी साधर्मिक भक्ति देखकर दांतों तले अंगुली दबाने लगे। अंत में वे साध्वीजी को कह गये कि चैन्नई के जैनों ने हमको साधर्मिक भक्ति सिखाई। अब हम भी नेल्लूर में अपने घर ऐसी ही संयमीओं के मेहमानों की साधर्मिक भक्ति करेंगे।

6) बहारगाँव वालों के शब्द थे कि ''म.सा.! हमको तो मेहमानों को लेकर जाने की इच्छा भी हो, तो भी घर पर श्राविका को नहीं अच्छा लगेगा यह विचार आते ही मौन रहना पड़ता है पर यहाँ तो हर घर में बहेनों के भाव ही जोरदार हैं। हम तो कभी साधर्मिकों को घर खाने का कहते है, तो दोपहर के समय श्राविका को ही बताकर ऑफिस चले जाते है, क्योंकि ये मेहमान हमारे नहीं है, साधुओं के हैं.... पर यहाँ तो भाई दुकान छोड़कर घर पर हाजिर रहते है, रिक्षा में लेकर जाते है और वापस छोड़ जाते है और रिक्षा के पैसे भी हमको नहीं देने देते और लगभग कोई भी घर ऐसा नहीं कि जहाँ हमारी स्पष्ट ना होने के बावजुद भी जबरदस्ती 100 रू. से बहुमान नहीं किया हो। कहीं कहीं पर तो 500 रू. से भी बहुमान किया।''

7) एक घर में एक बुढ़ी माँ, लकड़ी के सहारे-सहारे चलते थे ,घर में पुत्रवधु वगेरह सब थे,सब ने उन माजी को शांति से बैठने को कहाँ ,पर शांति से बैठने की बात राजस्थान के माजी, साधर्मिको के घर आने के बाद माने तो राजस्थान की महिमा ही क्या? वे माजी नहीं माने, लकड़ी के सहारे-सहारे चलते, ''यह लाओ वो लाओ....'' आदेश करते है, बहुअे भी पुरी लाज मर्यादा के साथ उनकी आज्ञा मानती है, अंत में जब माजी थक गए तो मेहमानों के पास ही बैठ गये और जबरदस्ती से सभी वस्तुऐ खिलाने लगे।

8) तीनों समय दो मिठाई, दो फरसाण लगभग होते ही.... दोपहर को तो पाँच-पाँच

मिठाई भी हो जाती, उसके उपरांत फ्रूट्स भी तीनों टाईम दो-दो तरह के...

9) सुरत से आए हेमंतभाई राठौड़ ने तो प्रवचन में अंत में दो-चार मिनिट लेक्चर दिया कि, '' इस प्रकार की साधर्मिक भक्ति का लाभ मैं यह देख रहा हुँ कि :-

- रसोई घर पर बनाते है, श्राविका बनाते है तो जयणा का पालन व्यवस्थित होता हैं।
- साधर्मिकों के बीच में परस्पर संबंध बढ़ता है, परिचय बढ़ता है, आत्मीयता बढ़ती है.... फिर तो जब भी एक दुसरे के शहर में जाये, तब एक दुसरे के घर पर ही उतरते है.... अब तो मोबाईल की व्यवस्था हो गई है, फोन नंबर ले लेते है और यह आत्मीयता खून के संबंध बिना की व निःस्वार्थ होने के कारण सच्चा साधर्मिक संबंध बना रहता हैं।
- घर के बालकों में साधर्मिक भक्ति के सुंदर संस्कार पड़ते हैं। बालक देखते है कि, ''ये आनेवाले लोग काका-मामा-फुफा-मासाजी तो नहीं है, कोई परिचित भी नहीं, फिर भी मेरे मम्मी-पप्पा इनका इतना सत्कार कर रहे है, उनके चरण स्पर्श कर रहे है, उनको तिलक करते है, उनको कदर देते है.... यानी यह मेहमान कोई खास ओर ऊँचे हैं।'' इस प्रकार भविष्य में वे भी साधर्मिक भक्ति करना सीखते है।

10) एक बहन को एक पैर में लकवा था, इसलिए अपने घर रसोई बनाकर भक्ति करने में असमर्थ थे। पर उनको पता चला कि, ''उनके कोई रिश्तेदार के यहाँ आज साधर्मिक भक्ति है, तो लकवा की हालत में भी अपने घर से कुछ वस्तुए लेकर उनके रिश्तेदार के यहाँ पहुँचे और परोसने आदि से पुरी भक्ति की।

साधर्मिक भक्ति के ऐसे तो अनेकानेक प्रसंग है, पर मुझे लगता है कि यहाँ इतना लिखना पर्याप्त हैं। आप न्याय म.सा. के संसारी पिताजी को पूछना, बहुत कम बोलने के स्वभाव वाले होते हुए भी इस बार साधर्मिक भक्ति के लिए बहुत-बहुत बोले।

ऐसा पक्का कह सकते है कि रसोड़ा बंद करने के कारण संघ के साधारण खाते के लगभग दस लाख रूपये बच गये।

चैन्नई में और दक्षिण भारत में घर-घर में आश्चर्यचकित कर देने वाली इस बात की चर्चा चली कि वर्षो से हर चौमासे में आराधना भवन में चलता रसोड़ा इस बार बंद रहा। संघ के लोगों ने जो घर-घर साधर्मिक भक्ति का लाभ लिया.... वाह-वाह-वाह !

एक खास बात....

'रसोड़ा रखना एकदम गलत ही हैं' ऐसा बिल्कुल नहीं मानना, मेरी निश्रा में भी हर बार हर चौमासा में इस तरह रसोड़ा ही रखा हैं।

संघ में उत्साह न हो, घर समर्थ न हो, मेहमान बहुत ज्यादा प्रमाण में आते हो, ऐसे

सब कारणों के कारण रसोड़ा रखना भी पड़ता हैं।

परंतु उपर का मार्ग ज्यादा अच्छा है ऐसा मुझे तो लगता हैं।

सभी संयमी भी अपने चातुर्मास क्षेत्र में शक्ति अनुसार प्रेरणा करके ऐसा काम शुरू करा सकते है.... सब श्रावक उसमें उत्साह दिखाए.... तो जैनशासन में साधर्मिक भक्ति नाम का दर्शनाचार सच्चे अर्थ में खिल उठेगा। नहीं तो मात्र रूपये देकर नौकरो द्वारा करवाइ गई साधर्मिक भक्ति को सच्चा दर्शनाचार मान लेने की गंभीर भूल कभी भी नहीं रूकेगी।

प्रभावना

विशाल और समृद्ध संघ में प्रवचन में रोज प्रभावना होना ये आम बात है, धनवान लोग कम से कम दस रूपये की प्रभावना लिखाते है यह स्वभाविक है। चैन्नई संघ में रोज 1000 लोग प्रवचन में आते थे, क्योंकी संघ ही बहुत बड़ा था। दस रूपये की प्रभावना करने वाले को 10,000 रूपये खर्च करने पड़ते है और धनवानों को इसमें कोई बाधा नहीं थी।

व्याख्यान में प्रभावना करनी यह गलत नहीं हैं। सिर्फ 10 रू. की ही नहीं, 1000 रू. की प्रभावना भी हो सकती है, यह भी एक प्रकार की साधर्मिक भक्ति ही है, श्रुत भक्ति ही है....

पर इसमें अमुक दोष प्रविष्ट हो गये हैं।

1) लोगों में प्रभावना की लालच बढ़ गई है, अब जो प्रभावना करते है, उनमें तो साधर्मिक भक्ति का भाव कम ओर ''प्रभावना करेंगे तो लोग आएँगे....'' ऐसा लोगों को इकट्ठा करने के भाव ज्यादा हो गये हैं।

बाल कक्षा के जीवों के लिए यह बराबर है, परंतु वर्षो से आराधना करने वाले अभी तक बाल जीव बने रहे यह उचित नहीं हैं। मात्र प्रभावना की लालच से सबको इकट्ठे करते रहना उचित नहीं है, अब 'प्रभावना के बिना भी, भोजन आदि के बिना भी सब आएँ' ऐसा आर्दश खड़ा करना ही पड़ेगा। इसलिए प्रभावना कम करना या कुछ अवसरों पर ही करना जरूरी हैं।

2) प्रभावना लेते वक्त जो धक्का-मुक्की होती है, असभ्य व्यवहार होता है, वस्त्रों का भी ठिकाना नहीं रहता है, ये सब बहुत ही शासन अवमानना का कारण हैं। अजैनों और नयी पीढ़ी के जैनों.... उन सबकों तो ऐसे दृश्यों को देखकर आघात लगता है, यहाँ लिख भी नहीं सके ऐसे शब्द ये लोग सोच लेते है कि, ''ये तो भिखारी की तरह....''

जब प्रभावना ज्यादा होती है तब ऐसा देखने को मिलता है। सामान्य(कम) प्रभावना होती है, तब प्रायः ऐसी हालत नहीं होती हैं।

3) 10,000 रू. खर्च करने की शक्ति कितने लोगो की? मध्यमवर्ग वगैरह के लिए इतने पैसे खर्च करने आसान नहीं हैं। बहुत लोग महीने के 30-40 हजार कमाने वाले होते है, उसमें से 10,000 रू. दे देना, ऐसी उदारता कितने लोग दिखा सकते हैं?

हा! वो 1 रूपये की प्रभावना लिखा सकते है और इस तरह 1000रू. वो दे भी सकते है, पर आज का समाज कैसा है? ये तो सब जानते ही हैं। कितने लोग 1000रू. देने वालों को कहेंगे कि, 'ये तो कंजुस है....' या तो ''उसके पास पैसे ही नहीं है....'' ऐसे ताने सुनने की शक्ति नहीं होती है, अतः वे प्रभावना लिखाते भी नहीं हैं।

ऐसे तो मध्यम वर्गीय वगैरह जैन, प्रभावना करने रूप स्वकर्तव्य का पालन नहीं कर सकते है और उनके हाथ से यह अमूल्य अवसर चुक जाता हैं।

यदि समाज में यह 10 रू.- 1 रू. का भेदभाव नहीं होता, तो कोई मुश्किल नहीं थी। कोई 100 रू. की करे, कोई 1 रू. की करे....

इसलिए ही तो शादी आदि के प्रसंगों में लोग उधार वगैरह लेकर भी दिखावा करते है ना। इसमें तो दोष है ही, साथ-साथ में समाज की व्यवस्था का भी दोष हैं।

इस का रास्ता इस प्रकार निकाला गया :-

1. धनवान या मध्यम.... कोई भी गृहस्थ 1 रू. ही लिखा सकता है, यानी की प्रभावना का नकरा 1001 रू. सबके लिए समान....
2. कोई 1 रू. से ज्यादा नहीं लिखावे....
3. एक दिन में सब मिलाकर ज्यादा से ज्यादा 5 रू. की प्रभावना। उससे ज्यादा नहीं ,जिससे लालच, धक्का मुक्की का प्रसंग ही नहीं बने।
4. कब, कौनसे दिन प्रभावना देना ,यह भी निश्चित नहीं। मन हो तब प्रभावना देना, जिससे कोई प्रभावना की लालच से आएँ ,ऐसा नहीं होगा।
5. कोई कहता है कि मुझे तो ज्यादा लाभ लेना है.... तो उनके लिए सूचना कि :-

- आयंबिल खाते में बहुत सारे तपस्वी आंयबिल करते है....
- पाठशाला में सैकंड़ो बालक पढ़ते हैं, भाई-बहनों को पढ़ाते है....
- संघ में कई जैन-अजैन काम करते है, सेवा देते है....

इन सबको आप प्रभावना दे सकते हो ना! वहाँ आप ज्यादा लाभ ले लेना।

इस बात पर यहाँ पर अच्छी तरह से अमल हुआ।

प्रभावना के लिए जल्दी जाना, उसके आवाज के कारण व्याख्यान में विघ्न आना....वगैरह अडचन दुर हो गई।

हा! 150 भाई बहनों ने प्रथम कर्मग्रंथ का अभ्यास करके उसकी परीक्षा दी। 75 प्रतिशत से जो पास हुए, उन सबको 2000रू. की प्रभावना दी गई।

11 बहनों ने और दो भाईयों ने संस्कृत की बुक का अभ्यास किया, उन सब को 15,000 रू. की प्रभावना प्रति व्यक्ति की गई, लगभग दो लाख रू. की प्रभावना इसमें देने में आयी।

इस प्रकार चौमासा दरम्यान अभ्यास करने वालों को 5 लाख जितनी प्रभावना दी गई।

दुसरे कर्मग्रंथ की परीक्षा अभी लेने वाले है, लगभग 50 बहने परीक्षा देगें, पर वो बहने मुझे कहकर गयी कि, "म.सा.! नरेन्द्र मोदी ने 500-1000 की नोट बंद की है, इसलिए सबको अभी पैसे की तकलीफ है, इसलिए हम सबको दुसरे कर्मग्रंथ की प्रभावना नहीं चाहिए। आप 1 लाख रू. की व्यवस्था कैसे करोगें। हम परीक्षा जरूर देंगे, पर हमको अब प्रभावना नहीं चाहिए।"

उस दिन तो मैं रो पड़ा, हमारा पढाया हुआ कर्मग्रंथ सफल हो गया था। 2000 रू. जितनी बड़ी प्रभावना के लिए वो बहनें मना कर रही थी। करोडपति घर की बहने भी जब पाँच-दस रू. की प्रभावना के लिए धक्का-मुक्की करते दिखते है, तब मध्यम वर्गीय इन बहनों की बात सुनकर आँखों में से आँसु निकले बिना कैसे रहे?

प्रभावना के प्रसंग में जो सुदंर प्रसंग बने है, वो बताता हूँ :-

(1) दीपावली के दस दिन पहले ही संस्कृत की दो बुक पुरी हुई थी, सबकी परीक्षा लेनी थी, परीक्षा में पास होने वालों को 10,000 रू. की प्रभावना थी(पहली बुक की 5000 रू. की प्रभावना दे दी गई थी।) मुझे विचार आया "परीक्षा तो दीवाली के बाद लेने की बात है, पर अगर अभी उनको प्रभावना दी जाये, तो उसका उपयोग अनुकुलता अनुसार कर सकते है ,आखिर है तो ये भी संसार में ही...."

ये पास होंगे या नहीं भी होंगे, पर पाँच-पाँच महिने तक पढ़े, ये भी कोई छोटी बात नहीं है, इसलिए उनका बहुमान करना ही चाहिए। दुसरे दिन दस-बारह कवर तैयार करवा दिये। पाठ के बाद मुमुक्ष नीत के द्वारा सबको कवर दिये गये, जिसे देख सब भौच्चके रह गये.... कितने तो ऐसे ही भागने लगे.... कितनों को हाथ में लेने के बाद मालूम पड़ा कि 10,000 रू. है, तो पढ़नेवालों में सबसे मुख्य पायल बहन को कवर

पकड़ाकर चलने लगे।

मैं दो मिनिट में दुसरा काम करके वापस आया तब यह सब धमाल होने की खबर मिली, मैंने तुरन्त नीत द्वारा सबकों वापस बुलाया और कहाँ, ''गुरू की तरफ से मिल रही भेंट को ठुकराओगे, तो घोर पाप बंधेगा.... आपको अपनी बुद्धि नहीं चलानी है'' ऐसे ऐसे शब्द कहकर, उनको डराकर कवर वापस लेने के लिए मजबुर किया। उन्होंने बचाव किया कि ''हम परीक्षा दे दे और पास हो जाये बाद में प्रभावना लेंगे'' पर इन सब बचावों का सामना करने की मेरी ताकत थी। उन्होंने मजबूरी में प्रभावना ली और मुँह चढ़ा कर उन सब ने विदा ली।

उसमें से एक बहन वापस आएँ :-

''म.सा.! दीक्षा लेने वालों के परिवार वालों को दीक्षा के खर्च में मुश्किल होती है, तो आप उनकी मदद का प्रयत्न करते हो ना? बहुत सारे लोग लाभ ले रहे है (इसके बारे में आगे विस्तार से बताऊँगा) म.सा.! हम इतने समर्थ नहीं कि पाँच हजार का भी लाभ ले सके, पर ये 10,000 तो मेरे है, घर पर भी पता नहीं है, आप ये ले लो, किसी की दीक्षा में काम आएँगें।''

बीस साल की उम्र के उन बहन के घर की परिस्थिति का मुझे ख्याल था। किराये के मकान में रहते थे, पिताजी की कमाई 35,000 रू. थी पर उसमें से 13,000 रू. तो किराये में चले जाते। घर में छः लोग.... कमाई भी नौकरी के कारण बंधी हुई, उसमें बढ़ोतरी होने की संभावना नहीं। 22 हजार में महिने का खर्च चलाना, दुसरी कोई पूँजी भी नहीं, एक वर्ष में ही किराया 15,000 रू. हो जाने की संभावना पक्की, ऐसे घर की वो पुत्री उसको मिले 10,000 रू. ''कोई दीक्षार्थी के परिवार को दीक्षा के खर्च में सहायक होंगे'' ऐसा समझ कर दे रही थी। उस परिवार में तीन बेटीयां और एक आठ वर्ष का छोटा बेटा.... तीनों लड़कियों की शादी की उम्र हो गई थी। ये बहन सबसे छोटे थे।

ये बहन दीन बनकर आँखों में आँसुओं के साथ कह रहे थे ''सब ने लाभ लिया है मुझे नहीं मिला'' ऐसा खेद व्यक्त कर रहे थे.... समाज की दृष्टि से आर्थिक रीति से अशक्त इस बहन के हृदय की श्रीमंताई देखकर मन में हुआ कि 'ये धनवान बिचारे कितने गरीब है कि जो पास में लाखों करोड़ों रू. होने पर भी नाम के बिना सन्मार्ग में अपनी सम्पत्ति का उपयोग करने को तैयार नहीं होते। हा! हाय लेकर इकट्ठा किया हुआ, अनीति करके इकट्ठा किया हुआ पैसा बुद्धि को भ्रष्ट करता है इसमें कोई आश्चर्य

नहीं।'

(2) संस्कृत पढंने वाले भंवरभाई ! उम्र 65 के आसपास ! वो भाई यानी?
- 130 वर्धमान तप की ओली के आराधक ! (100 ओली के बाद वापस 1-2-3-4-5 ऐसे नहीं परंतु 101,102,103.... इस प्रकार 130 ओली)
- कुल 300 से उपर तो उन्होंने अट्ठाई की है (यह आंकडा बिल्कुल गलत नहीं, यह बात खास ध्यान में रखना)

उनको संस्कृत पढ़ने की ऐसी धुन लगी कि रोज के कम से कम पाँच-छः घंटे मेहनत करते। ऐसे तो इंजिनियर थे, परंतु इतनी उम्र में संस्कृत पढ़ने में मुश्किल बहुत होती हैं। पर फिर भी दिल से पुरी मेहनत करते। पहली बुक की परीक्षा में फेल हुए, पर 'हिम्मत हार जाएँ', उन में से वो नहीं थे, जबरदस्त मेहनत की, पढ़ते ही रहे। उनको भी 10,000 रू. की प्रभावना दी गई, उन्होंने आनाकानी किये बिना ले ली। मुझे आश्चर्य हुआ कि 'ये मना तो बोलेंगे ही' पर ऐसा नहीं हुआ।

चौमासा के बाद कॉलेज का एक युवा मेरे पास आया ''म.सा. ! आपके पास जो भंवरभाई आते है, उन्होंने मेरी जिंदगी बचा ली,'' बोलते-बोलते वो गद्गद् हो गया।

''म.सा. ! मैं छोटा था, तब मेरे पापा गुजर गए थे, उसके बाद मम्मी ने काम करके मुझे बड़ा किया। अब कॉलेज में पढ़ रहा हुँ, कॉलेज की इतनी ज्यादा फीस भरने में बहुत मुश्किल हो रही थी। पिछले वर्ष ही भंवरभाई के पास मैंने मांगे थे और उन्होंने मेरी मदद की थी। इस वर्ष वापस जरूरत पड़ी, पर उनके पास बार-बार मांगते हुए शरम आ रही थी , इसलिए मैंने दुसरे सब के पास मांग कर देखा। फीस नहीं भरी जाएँगी तो कॉलेज छोड़ना पड़ेगी और जिंदगी बिगड़ेगी....''

साहेब जी ! फीस भरने का अंतिम दिन ही बाकी था और अचानक भंवरभाई ने मुझे बुलाया। उनको कहीं से पता चल गया था कि ''मुझे जरूरत है'' मेरे हाथ में 10,000 रख दिये और कहाँ कि ''आज मुझे संस्कृत की जो प्रभावना मिली है वो वैसे तो मैं लेने वाला नहीं था पर म.सा. का आग्रह था ही और मुझे पता चला कि, ''तुमको जरूरत है'' इसलिए ले लिए, लो ,जाकर अपनी फीस भर दो।''

मैं स्तब्ध रह गया।

उस व्यक्ति की भावनाओं के लिए आँखों में से धड़-धड़ आँसु टपकने लगे।

(3) रसना बहन नाम के अठारह वर्ष की उम्र वाले एक बहन भी संस्कृत पढ़ रहे थे। चौमासे के पहले ही पहली बुक पुरी हो गई थी और सब के साथ उन्होंने भी संस्कृत

की परीक्षा लिखी, पर उसमें वो फेल हो गये। ''65'' के आसपास अंक आए, पर हम तो ''75'' अंक से ही पास गिनते हैं। मैंने चेक करके सबको उत्तर पत्र वापस दे दिया था। दुसरे दिन रसना बहन उत्तर पत्र वापस लेकर आए और कहाँ, ''म.सा. ! इसमें भूल से 10 अंक गिनने बाकी रह गये, देखो यहाँ पर लिखे हुए है, पर टोटल में नहीं जोड़े।''

मुझे ध्यान था कि भूल मेरी नहीं थी पर उन बहन की थी, मैंने उत्तर पत्र हाथ में लेकर वापस गिनती कराई और बताया कि ''ये दस अंक मिलाकर ही 65 आए हैं।''

उनको अपनी गलती का अहसास हुआ ''सॉरी !'' नये जमाने के होने के कारण मिच्छामी दुक्कडं को अंग्रेजी में बोला।

पर मेरा स्वभाव उदारता वाला था, किसी का भी दुःख देख नहीं सकता। मैंने उत्तर पत्र हाथ में लेकर उसमें ''75'' अंक लिख लिये(ऐसा नहीं करना चाहिए, क्योंकि यह भी मृषावाद ही हुआ ना ! पर मुझे लगता है कि इस अवसर पर ऐसा करना उचित था।)

''नहीं, म.सा. ! ऐसा नहीं चलेगा। मैं फेल हूँ तो फेल ही कहलाऊँगी, मुझे ख्याल नहीं रहा इसलिए यह भूल हो गई'' ऐसा कहकर तुरंत ही चले गये।

दुसरे दिन संस्कृत के विद्यार्थी और रसना बहन की सहेली भारती बहन के द्वारा 5000 रू. की प्रभावना भिजवाई(कवर वगैरह की सारी व्यवस्था नरेश भाई संभालते थे।) दोपहर को वो वापस आएँ और वहाँ हुई सारी घटना बताई।

''रसना बहन की दुकान नीचे और घर ऊपर है, वे मुझे दुकान में ही मिल गये। मैंने कवर दिया पर कोई भी हालत में लेने को तैयार नही थे, वहाँ पर ही कवर रखकर वो उपर भाग गये, अंत में दुकान में खड़े उनके पापा को समझा कर कवर दे दिया।''

बड़ी-बड़ी प्रभावना भी नहीं लेने की इतनी खटपट ! इन सब जीवों की ये कैसी उत्तमता !

(4) प्रवचन में एक बार भार पूर्वक प्रेरणा की कि :-

- प्रभावना लेना ये दोष नहीं है, प्रभावना लेनी ही चाहिए। प्रभावना देने वाले के भावों की वृद्धि इससे ही होती हैं।
- परंतु प्रभावना की लालच, अपेक्षा यह दोष हैं।
- तुम सब एक काम करो, 100 रू. तक की कोई भी प्रभावना मिले, तो वो अपने उपयोग में ना लेकर कोई भी धर्म क्षेत्र में खर्च कर देना। उदा. लड्डु मिले तो मंदिर में चढ़ा देना.... गरीब को दे देना...

और उस प्रवचन में लगभग 250 जितने श्रावक-श्राविकाओं ने इसकी प्रतिज्ञा

ली।

प्रभावना देना वो भी धर्म !

प्रभावना लेना वो भी धर्म !

प्रभावना अपने लिए नहीं वापरना वो भी धर्म !

प्रभावना धर्म क्षेत्र में वापरना वो भी धर्म !

ये प्रभावना के मेरे छोटे-मोटे सुंदर अनुभव !

आप सब भी ऐसे ही बनो, ऐसी अपेक्षा रखता हुँ।

अल्पाहार + तप + पारणा

चातुर्मास में हर रविवार को शिविर के बाद अल्पाहार की व्यवस्था रखीं जाती हैं। संघ उदार होने से खर्चे का तो कोई प्रश्न ही नहीं था, परंतु सादगी मुझे बहुत जरूरी लगी। शिविर में आने वाले साधर्मिक तो थे, उनको ज्यादा खिलाएँ, तो उसमें साधर्मिक-भक्ति का लाभ तो था ही, पर अभी हमारे हर एक अनुष्ठान ऐसे होने लगे है कि 'बड़ी प्रभावना या व्यवस्थित भोजन हो, तो ही लोग आते है....' सब में पड़ी हुई यह बुरी आदत दूर हो, यह भी जरूरी लगा।

''ज्यादा आईटम के बिना शिविर आदि नहीं हो सकते'' मन में घिरी हुई ऐसी मान्यताओं का निराकरण करना भी जरूरी लगा।

शिविर आदि के सब खर्चे चातुर्मास के खर्च तरीके गिने जाते है और इस कारण चातुर्मास खर्च बहुत बढ़ जाता है, यानी छोटे-छोटे संघ, मध्यम परिवार वाले संघ चिंता करने लगते है कि, ''हमको म.सा. का चातुर्मास तो कराना है, पर उसके लिए इतने लाख रू. खर्च होगा। हम इतना खर्चा तो नहीं कर सकेंगे, तो क्या करना? इस चिंता के कारण वे चातुर्मास कराने में घबराते हैं।''

ट्रस्टीयों को ये चिंता होती है कि, ''संघ के सदस्य पैसा खर्चे तो बराबर ! पर वो नहीं खर्चे, तो अंत में तो हमारे उपर ही पुरी जवाबदारी आएँगी.... इसलिए वो भी चातुर्मास कराने से घबराते हैं।''

अरे, इसी कारण से आजकल श्रीमंत ही ट्रस्टी बनते है ना ! आराधक नहीं बनते, क्योंकि आराधकों के पास यदि पैसे नहीं हो, मर्यादित हो, तो वो खर्चा नही कर सकते, तो फिर शिविरादि में अल्पाहार आदि कार्य नहीं हो पाएँगे, तो फिर साधु कहते है कि, ''संघ....हैं।''

यदि श्रीमंत ट्रस्टी होते है, तो वे लोग लाखों खर्च करके चातुर्मास ठाठबाट के साथ करा देते है, सब खुश ! पर इसमें आराधना तो टूट कर बिखर जाती हैं।

यानी अब ऐसे चातुर्मास आदर्श के रूप में स्थापित करना जरूरी है कि, ''जो चातुर्मास संघ के उपर अत्यन्त कम खर्चे के साथ पुरा हो जाय जिससे छोटे-छोटे संघ भी चातुर्मास कराने के लिए सक्षम बन जाए।''

इसी कारण से हमनें नीचे के निर्णय लिये :-

1. शिविर के अल्पाहार में मात्र दो ही वस्तु बनाना। चाय-थेपला, इटली-चटनी, मेदूवडा-साभांर, सीरा-केलावडा.... वगैरह। और इस नियम का सब शिविरों में पालन हुआ। फायदा यह हुआ कि :-

- दो ही वस्तु बनाने के कारण जयणा का पालन.... अच्छी तरह हुआ।
- बिगाड कम हुआ।
- खर्चा कम हुआ।

प्रायः चातुर्मास की सब शिविरों का खर्च कुल सवा-डेढ लाख के आसपास हुआ होगा।

2. तप ऐसा ही कराना कि जिससे मीठा रसोडा संघ में सामूहिक तरीके नही करना पड़े। इसलिए इस बार 45 आगम के 45 आयंबिल का तप कराया। आयंबिल खाता तो चालु ही था। यानी नया रसोड़ा-मीठा रसोड़ा कराना नही पड़ा और उसके लिए कोई फंड भी नही करना पड़ा।

आने वाले कुरूक्कुपेट के चातुर्मास में भी 45 एकासणा वगैरह तप ही कराने का सोचा हैं। ऐकासणा भी घर पर ही करना, ताकि वहाँ भी रसोड़ा करना नहीं पड़े।

3. पर्युषण में भी सब को भारपूर्वक प्रेरणा कि, ''रोज मात्र दो ही द्रव्य से ऐकासणा करके अनुठी अट्ठाई करो। सात दिन ऐसे त्याग प्रधान दो द्रव्य के ऐकासणा.... और अंतिम दिन उपवास....''

4.कोई भी पारणा संघ में होगा, तो उसमें 8 द्रव्य से ज्यादा आईटम नही बनानी। दुसरे सब पारने की बात तो दुर, पर भादरवा सुद 5 के दिन भी पारने में मात्र आठ ही आईटम बनायी। ये निर्णय लेने में तकलीफ भी बहुत आई, क्योंकि,

मुंग का पानी, केर का पानी, चाय, दुध, साकर-वरियाली का पानी इस प्रकार पांचेक प्रकार के तो पानी ही हो जाते है उसके बाद दो-तीन सब्जी, दो-तीन मिठाई, दो-तीन नमकीन, छोटी-छोटी परचूरण आईटम.... लगभग बीस-बाईस आईटम तो हो ही

जाती हैं। उसमें से सिर्फ आठ वस्तु ही पारने में कैसे करवाना?

अंत में ऐसा निर्णय हुआ कि अट्ठम-अट्ठाई या कोई भी तप वाले को, सब को मात्र आठ ही वस्तुओं से पारणा करवाया जाएगा(हा! अट्ठम वालों को अलग प्रकार की आईटम.... अट्ठाई वालों को अलग प्रकार की....क्योंकि वो भारी वस्तु नहीं खा सकेंगे, चार पाँच आईटम तो दोंनो में समान ही.... ऐसे कुल मिलाकर बारह वस्तुएँ बनी, पर एक व्यक्ति को आठ से ज्यादा वस्तुएँ नहीं परोसी गई।)

लाभार्थीओं को समझाया गया कि :- ''तुमको तपस्वीओं का सचमुच लाभ लेना हो, तो 20-25 आईटम बनाने से यह लाभ नहीं मिलेगा, क्योंकि तप के पारने में एक साथ एक ही बार में तपस्वी बहुत कम ही खा सकते हैं। इसके बदले आप सब तपस्वीओं को मिठाई का डिब्बा प्रभावना में दे दो। घर जाकर भी यह मिठाई पाँच-दस दिन तक खा सकते है, इस प्रकार लंबे समय तक उनके पारने का लाभ मिलेगा।''

और लाभर्थियों ने भी कमाल कर दिया, हमारी सुचना के अनुसार उन्होंने अट्ठाई के तपस्वीओं को 1 किलों और अट्ठम आदि के तपस्वीओं को आधा किलो कलाकंद की प्रभावना की। जिसका उपयोग हर तपस्वी ने अनेक दिनों तक किया।

बाद में कितने ही तपस्वी आकर कह गये कि,''म.सा.! ये बहुत अच्छा किया।''

पुरस्कारी करने वाले मंडल भी कह गये कि ''म.सा.! इस बार हमको पुरस्कारी करने में शांति रही। आईटम कम होने से फटाफट हो गया।''

पारना करने वाले भी कह कर गये कि ''म.सा.! ज्यादा वस्तु होती है तो ''ये खाना कि वो?'' ऐसे विचारों के कारण बहुत परेशान होते है और सब खा-खाकर तबियत भी बिगड़ती है, इस बार तो एकदम शांति से पारना किया....''

हा! कुछ लोंगों की फरियाद भी आई, सब एक जैसे तो नही ही होते है ना!

5. कोई भी रसोड़ा सूर्योदय के पहले शुरू नहीं हुआ।

6. जिसने भी अट्ठाई की, उनको सुचित कर दिया कि, ''आपको फंक्शन में मात्र आठ ही आईटम रखनी है, आपके वरघोड़े में महंगे-महंगे बेंड़-बाजा वाले नहीं बुलाना, उसमें भी जैनेतर बैंड तो लगभग मांसाहारी, शराबी ही होते हैं। हमारे पैसों से उनको पोषण क्युँ देना? इसलिए संभव हो, तो उनको नहीं बुलाना....''

यदि इतना मंजुर हो तो आपके घर तप निमित्त पगलिया करेंगे। नहीं तो पच्चक्खाण देंगे, वासक्षेप भी डालेंगे, पर पगला नहीं करेंगे।

और बहुत सारे लोगों ने इस नियम का पालन किया। म.सा. को पगलिया कराने

की पवित्र भावना के कारण उन्होंने आडंबर बंद किये, मध्यम वर्ग को तो बहुत लाभ हुआ। समाज के कारण से उनको जो खर्चे करने पड़ते थे, वो हमारे नियमों के कारण नहीं करने पड़े और समाज भी ऐसे ही कहने लगा कि ''म.सा. बहुत कड़क है, इसलिए खर्चा नहीं किया'' इस प्रकार उनको खराब भी नहीं लगा।

एक तपस्वी ने मात्र 25 उपवास करके पारना कर दिया। क्योंकि मासक्षमण करे, तो बड़ा खर्चा करने की अनुकुलता नहीं थी। ऐसा तो एक प्रसंग नजरों के सामने देखा। बाकी इसके सिवाय अंदर न जाने मात्र इस खर्च के कारण अपने तप की भावना को तोड़ने वाले कितने होंगे?

अब तक तो मात्र दान धर्म ही श्रीमंतों के हाथ में था। तपधर्म तो सब कर सकते थे। पर अब तो तपधर्म के लिए भी श्रीमंताई जरूरी बनने लगी। ये कैसी समाज की व्यवस्था?

एक संघ के आराधक श्रावक ने मुझे कहाँ था कि, 'हमारे संघ में हमारे माने हुए गुरू का चौमासा था।' बड़े आचार्य भगवंत का चातुर्मास बहुत भाग्य से मिलता है, इसलिए मेरी श्राविका ने तप चालु किया, 16उपवास हो गये, मासक्षमण भी एकदम सरलता से हो जाता, पर उस वक्त पैसे की अनुकुलता नहीं थी, इसलिए मेरे पापा ने कहा, ''बहू! इस बार रहने दो। तुं मासक्षमण करेगी, तो सबको बुलाना पड़ेगा, खाना खिलाना पड़ेगा, अभी ऐसी ताकत नहीं हैं।''

श्राविका ने कहाँ कि, 'मुझे कुछ नहीं कराना है, मात्र तप करने दो' पर पापा ने मना किया, कहाँ 'नहीं बहू! तुं तप करेगी, तो फिर सब कराना ही पडेंगा' अंत में श्राविका ने पारना किया।''

और मेरे चातुर्मास दरम्यान मासक्षमण किया।

ऐसे ऐसे प्रसंग जानने सुनने के बाद, मध्यम वर्गीय जैनों की बात अनुभव करने के बाद मुझे लगा कि, ''ऐसा कोई निर्णय लेना ही पड़ेगा। मैं इसको रोकूंगा तो ही यह रूकेगा। नहीं तो समाज उनको कैसे-कैसे शब्द सुनायेगा।''

हाँ! यह निर्णय श्रीमंतो को शायद अच्छा नहीं लगेगा, पर सिर्फ उनके लिए मैं अलग निर्णय नहीं कर पाऊँगा। वो मेरे पास नहीं आएँ, मेरे पीछे संपत्ति का व्यय नहीं करे.... ऐसा सब हो भी जाए, पर ये सब स्वीकार करके दृढ़ता के साथ यह कदम उठाया और पालन भी किया। संघ में अग्रणी के यहाँ बड़ा तप था, पर उन्होंने आठ आईटम का नियम नहीं पाला, तो उनके घर पगलिया नहीं किये। हँसते-हँसते कह दिया कि 'आपके यहाँ की अट्ठाई की अनुमोदना, पर नियम तो मुझे पालना ही पड़ेगा।'

पारणा पांचम को लीलोतरी बंद

पर्युषण के पारणा के दिन नारियल का पानी, फ्रुट्स वगैरह होते है, सच में सुद पांचम होने से लीलोतरी नहीं वापर सकते ! गृहस्थ अपने घरों में लीलोतरी वापरे, उनको हम नहीं रोक सकते, सिर्फ उपदेश दे सकते है, परंतु अगर संघ में भी पारने के दिन लीलोतरी का उपयोग हो, तो ये एक प्रकार की छुट ही हो जाएगी ना?

संघ के पुराने और वडील आराधक छगनजी वर्षो से ऐसी भावनावाले थे कि ''लीलीतरी नहीं होनी चाहिए'' पर उनकी यह भावना पुरी नहीं हुई थी।

इस बार संघ ने कहा कि, ''म.सा. ! हम तो पिछले वर्ष ही लीलोतरी बंद करना चाहते थे, पर यह निर्णय लेने के पहले ही पारणा का आदेश दे दिया था और लाभार्थी लीलोतरी बंद करने की बात नहीं माने। इस बार तो आदेश देने के पहले ही जाहिरात कर देंगे कि,''पारणे में आठ ही द्रव्य है और लीलोतरी बंद है, पारणे का चढ़ावा लेने वाले यह बात ध्यान में रखें।''

और इस वर्ष इस प्रकार से पारणा पांचम को लीलोतरी संपूर्ण बंद रही।''

हर वर्ष के संस्कार के कारण कितने ही लोंगो ने लीलोतरी मांगी, जैसे कि नारियल का पानी, फ्रुट्स मांगे.... पर उन सब को विनय के साथ मना बोलना पड़ा ''इस बार(इस बार से) लीलोतरी बंद हैं।''

मांगने वाले को यह बात अच्छी तो नहीं लगी होगी, पर दुसरा कोई चारा भी नही था।''

संवत्सरी में 1500 पौषध

भाई बहन सबके मिलाकर 1008पौषध कराने की हमारी भावना थी। श्री वर्धमान मंडल ने उसका प्रचार किया, पास छपवाई, व्याख्यान में जाहिरात की और चैन्नई के इतिहास में और शायद भारत के इतिहास में लिखने जैसी यह घटना बनी।

1) 650 से भी ज्यादा भाईओं ने सवंत्सरी के दिन पौषध किये।

2) बारसा सूत्र वाचंन के समय व्याख्यान का पोना हॉल पौषार्थी भाईओं से भरा हुआ था, जहाँ बहनें व्याख्यान सुनने के लिए बैठती थी, वो पुरा भाग भी भाईओं से भर गया। पौषार्थी बहनों या दुसरी बहनों को भी बैठने के लिए जगह नहीं रही, सिर्फ 15 प्रतिशत या 20 प्रतिशत जितनी जगह में बहनों को बिठाया।

3) हमेशा बहनों से भरने वाला हॉल आज भाईओं से भरने के कारण व बहनों को बैठने की जगह भी नहीं मिलने के कारण अंत में उन सबको चौथे माले के हॉल में भेजा गया और वहाँ हेमगुण म.सा. के मुँह से ढालीया सुनकर उन सबने संतोष माना।

4) आज पहली बार ऐसा हुआ कि भाईओं को बैठने के लिए व्याख्यान में जाजम बिछाने की जगह ही नहीं रही। मात्र पोषार्थी.... अंत में अविरतिधारी श्रावकों को भी चौथे माले भेजना बड़ा और उन्होंने भी ढालीया सुनकर संतोष माना।

5) सबके चेहरे पर एक आश्चर्य-अचंभा देखने को मिलता, 'इतने सारे पौषध हो सकते है', सबको यही प्रश्न ! उसमें भी ज्यादातर तो युवान थे, छोटे बालक और वृद्धों की संख्या कम थी....

6) क्रिया भवन, चंदनवाला, राजेन्द्रभवन और जुना मंदिर.... इन चारों उपाश्रय में कुल मिलाकर 900 से भी ज्यादा बहनों के पौषध थे।

7) प्रायः 70 प्रतिशत जितने भाई बहन तो ऐसे थे, जिन्होंने जिंदगी में पहली बार ही पौषध किया था। उसका अपार आनंद उनके चेहरे पर दिखता था।

हाँ! सब नये होने के कारण अविधि भी बहुत हुई....पर उसके सामने उनके उत्साह, उनका धर्म में प्रवेश का लाभ बहुत ही बड़ा....

मुझे लगता है कि मेरी जिंदगी में मैं वापस इतने पौषध वापस कभी नहीं देख पाऊँगा।

बाहर गाँव में ऐसे समाचार भी गये कि 1800 पौषध हुए, पर ये बात गलत है, 1500 के आसपास पौषध हुए, कम ज्यादा भी हो सकते हैं।

8) इस आराधना को देखकर दो श्रावकों की इच्छा हुई कि, ''सबको 100-100 रू. की प्रभावना....'' वर्धमान मंडल भी 50 रू. की प्रभावना करने वाला था(पर इसमें से एक भी प्रभावना की जाहेरात नही हुई थी।) एक-एक पौषार्थी को 250 रू. की प्रभावना करने में आयी, पर रातोंरात यह निर्णय होने से और सवंत्सरी की छुट्टी होने के कारण 100 के नोट नहीं मिले और सब लोंगो तक व्यवस्थित प्रभावना नही पहुँच सकी, उसका दुःख उन दोंनो श्रावको को रह गया।

माईक बंद

आराधना भवन में माईक का उपयोग करने की छूट हैं। उसके हॉल में कुल 1000 लोग बैठ सकते है और यह संघ इतना बड़ा है कि कोई भी साधु हो फिर भी 50 दिन तो पुरा हॉल भर ही जाता हैं। सबको आवाज पहुँचे, यह संभव नहीं हैं। इसलिए

ऐसी भी व्यवस्था है कि माईक में व्याख्यान चालु हो तो वो लोग ग्राउन्ड फ्लोर और तीसरे व चौथे माले पर बैठकर भी प्रवचन सुन सकते हैं।

आराधना भवन = ग्राउण्ड फ्लोर+पहला फ्लोर(व्याख्यान हॉल+मंदिर)+ गैलेरी(दुसरा फ्लोर)+तीसरा फ्लोर(साधुओं के उतरने का स्थान)+चौथा फ्लोर(हॉल)+छत(दोनों तरफ उपर छतवाली जगह और बीच में खुल्ली छत....)

विहार में मुझे अनेक लोंगो ने कहा कि, ''म.सा.! आपको माईक में प्रवचन देना पड़ेगा, वहाँ माईक बिना नहीं चलेगा।''

मेरा निर्णय स्पष्ट था कि, ''मैं माईक में नहीं बोलूँगा, चाहे कुछ भी हो जाय....''

ट्रस्टी मंडल ने तो कह दिया कि, ''साहेब जी! आपकी जैसी भावना हो उस तरह करना, हम आपको आग्रह नहीं करेंगे''

परंतु अलग-अलग लोंगो ने कहा कि, ''दुसरे तो वापरते है तो आपको क्यों एतराज है? क्या दुसरे गलत करते हैं?'' ''माईक के बिना आवाज पीछे तक नहीं पहुंचेगी, तो बहुत लोग आपके प्रवचन से वंचित रहेंगे।''

''हॉल चोकोर नहीं है, बल्कि लंबा और कम चौड़ाई वाला है, इसलिए भी आवाज पहुँचना मुश्किल है, आपकी यह माईक नहीं वापरने की जिद लोंगो को अच्छी नही लगेगी।''

मैंने उत्तर दिया....

- हर उत्सर्ग मार्ग में अपवाद होता ही है, और माईक वापरने में भी अपवाद हो सकता हैं।

- कितने ही मुनि माईक वापरते भी है, 'यह सब गलत करते है', ऐसा मैं नहीं मानता, कहता भी नहीं, यदि उनके पू. गच्छाधिपतिश्री ने उनको अपवाद के रूम में सहमति दी हो तो यह उनका विषय हैं, अगर गीतार्थ गच्छाधिपतिश्री को यह उचित लगा होगा तो उन्होंने सहमति दी होगी।

- पर मेरे लिए मुझे यह अपवाद लेने की जरूरत नहीं लगी, इसलिए मैं माईक नहीं वापरूंगा।

इस प्रकार माईक नहीं वापरने के मेरे आचार को मैं दृढ़ता से पाल सका। इसके लिए कितने ही कहते है कि, ''मैंने गलत किया हैं।''

पर मुझे तो ऐसा लगता है कि, ''मैंने यह सही किया है'' हाँ! बहुत सारे लाभ मैंने खोये, पर नहीं दिखने वाले बहुत सारे नुकसानो से भी मैं बच गया और नहीं दिखने वाले बहुत सारे लाभ मुझे मिले भी हैं।

इस बारे में भी बहुत कुछ कहना है,पर मुझे लगता है कि मैं बोलकर क्या करू? समय ही बोलेगा। बीस वर्ष के समय में यह काल ही सब प्रश्नों के उत्तर दे देगा।